समाज का अत्याचार

मूल लेखकः—

बङ्गाल के सुप्रसिद्ध उपन्यास लेखक

बाबू शरत् चन्द्र चट्टोपाध्याय

अनुवादकः—

"आतिश"
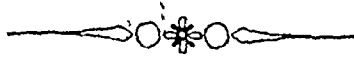
प्रकाशकः—

नारायणदत्त सहगल एण्ड सन्ज़

पुस्तक विक्रेता लाहौर

प्रकाशक—
बलराज सहगल
प्रोप्रा० नारायणदत्त सहगल ऐण्ड संज़
लाहौर

१५०० प्रति   अक्तूबर १९४०   मूल्य १॥)

मुद्रक
एस० सी० लखनपाल
रमेश प्रिंटिंग वर्क्स मोहनलाल रोड,
लाहौर ।

बङ्ग साहित्य के अधुनिक उपन्यास लेखकों में रवीन्द्र बाबु के बाद शरत् बाबु का ही स्थान है। और कुछ लोग तो उपन्यास लेखन कला मे रवीन्द्रबाबु से भी ऊंचा स्थान शरतबाबु को देते हैं।

शरत्बाबु की भाषा लिखने की रीति-नीति सम्पूर्णता उनकी अपनी है। उन की बातों मे एक ऐसा सकरुण सौन्दर्य रहता है, जो अन्यत्र कहीं भी देखने मे नही आता।

शरत्बाबु की एक प्रधान विशेषता यह है, कि वे अपने उपन्यास मे एक भी व्यर्थ की बात नही आने देते थे। उन्हों ने जो लिखा है वह इतना सपष्ट है कि पढ़ने वाले की आंखों के सन्मुख चित्र सा खिंच जाता है। और उपन्यास को विना समाप्त किये छोड़ने की इच्छा नहीं होती।

शरत्बाबु ने अपने उपन्यासों मे जो कुछ अंकित किया है. वह बङ्गाल की गृहस्थी का सरल चित्र है। बङ्गालियों के सामाजिक और जातीय जीवन का सच्चा फोटो है।

शरत्बाबु के ग्रन्थों के अनुवाद से हिन्दी साहित्य को लाभ होगा और उसके गौरव की वृद्धि होगी। इसी भावना से प्रेरित होकर मैंने उनके एक प्रसिद्ध उपन्यास का हिन्दी, अनुवाद किया है। शरत्बाबु की भाषा जैसी सरल है, उसका अनुवाद भी वैसा ही कठिन है। फिर भी मैं ने हिन्दी भाषा के मुहावरे के अनुसार

अनुवाद करने की चेष्टा की है। इस चेष्टा मे मुझे कहां सफलता प्राप्त हुई है। यह बतलाना मेरा काम
प्रो॰
का है।

मैं इस उपन्यास के विषय में इससे अधिक और कुछ लिखना चाहता और यह लिखकर भूमिका समाप्त करता हूं यह जो कुछ भी है आपके सन्मुख है आप इसका ध्यान अध्ययन करे और लाभ उठाये। यदि पाठकों मे से किसी भी इस के अध्ययन से लाभ उठाया तो मै अपना परिश्रम समझूंगा।

१५०० प्रति

लाहौर
तारीख १५-१०-१९४०

कृपा अभिलाषी
"आतिश"

समाज का अत्याचार

(१)

संध्या होने को थी। अभी सूर्य देवता ने रात्रि के घोर अन्धकार में मुख नहीं छुपाया था। इस लिये सड़को पर दीपक प्रज्वलित नहीं हुए थे। कलकत्ता के बाज़ारो में खासी भीड़ भाड़ थी। ट्राम गाड़ियों के डब्बे दफ्तर के बाबू लोगो से खचाखच भरे हुए थे। यह सब अपने अपने घरो को वापस जा रहे थे। जिनका वेतन थोड़ा था, वह अभागे चुपचाप सिर नीचा किये चले जा रहे थे। किसी के हाथ में सबज़ी तरकारी थी, तो कोई खाली हाथ था, कोई प्रसन्न चित्त प्रतीत होता था, तो कोई चिन्ता मे निमग्न। जो चिन्ता में निमग्न थे, वह सिर नीचा किये धीरे धीरे जा रहे थे। जितना

वह सोच विचार करते, उतनी ही उनकी लालसायें मार्ग के अन्धकार की भान्ति बढ़ती चली जा रही थीं।

दफ़्तर के कार्य से निवृत्त होकर, बाबू लोग अब निश्चिन्तता पूर्वक अपने अपने घरो में विश्राम करेंगे।

कहीं कहीं कुछ बाबू लोग तम्बोली की दुकान पर खड़े पान और सिगरेट खरीद रहे थे।

दुराचारी, व्यभिचारी धनाढ्य पुरुषो की गाड़ियां, मोटर कारे धूल में नहाई हुई सड़क की पथरीली भूमि पर खड़-खड़ाती हुई, छींटे उड़ाती हुई तेज़ चाल से चली जा रही थीं।

चितपुर रोड पर लोगो की खासी भीड़ थी।

कलकत्ता निवासी! पुर रौनक बाज़ार!! कन्धे से कन्धा छिलता था। दुकानो की ऊपर की मंज़ल में ऊपर बरामदे में अनेक प्रकार की पोशाके पहने अभागी स्त्रीयां, जिन के चेहरे मुरझाये हुये और जिन के गालो पर झुरियां पड़ी हुई थीं, कैदियो के समान एक पंक्ति में बैठी हुई नज़र आ रही थीं।

१५००

एक दुकान के सामने लोगों की काफी भीड़ थी।

ऊपर की मज़ल में एक सुन्दर साड़ी लटक रही थी। साड़ी की सरसराहट में न जाने कितने लोगो के हृदय डावां डोल हो रहे थे। मन चले युवक चलती गाड़ी से सिर निकाले तीव्र दृष्टि डाले चले जा रहे थे। बरामदे में एक युवती खड़ी थी। उस की निगाह कभी दूर जाती थी और कभी फूलो के गमलों पर ठहर जाती थी। कुछ कलियां खिल खिला कर हंसने के लिये अधीर हो रही थीं।

एक खम्बे के समीप ही एक बड़ा सुन्दर पिंजरा लटक रहा था। जिस में एक सुन्दर चकोर कैद था। सुन्दरी उस के सिर पर प्यार से हाथ फेरने लगी। एक युवती बान्दी पान का डिब्बा ले आई। सुन्दरी ने पान खाया। इस के पश्चात उस चकोर के साथ अठखेलिआं करने लगी।

इतने में बान्दी ने कहा————"बाई जी! तनिक सामने तो देखो।"

सुन्दरी ने पूछा————"क्यो ? क्या है ?"

————"उस भीड़ की ओर देखो!"

कुछ दूरी पर एक दुकान के सामने लोगा की बहुत भीड़ था। उस भीड़ में लाल पगड़ी पहने एक कांस्टेबल भी दिखाई देता था। दफ़्तर के बाबू से लेकर तम्बोली तक खड़े तमाशा देख रहे थे। वहां कुछ दुकानदार भी खड़े थे।

सुन्दरी कुछ देर तक टकटकी लगाये उस भीड़ की ओर ध्यान से देखती रही, फिर बान्दी से कहने लगी।

————"क्यों ? यह भीड़ कैसी है ?"

————"यदि आज्ञा हो तो देख आऊं।"

————"जाओ!"

सुन्दरी उस भीड़ को देखकर कुछ विस्मय और चकित अवश्य थी। यद्यपि इतने बड़े शहर में ऐसी भीड़ प्राय: हो जाया करती है, फिर भी न जाने क्यों इतनी अधिक भीड़ देखकर उस के हृदय में एक हल चल सी मच गई, और वह धीरे धीरे बढ़ती ही चली गई।

बान्दी चली गई। सुन्दरी बरामदे में खड़ी देखती रही।

बान्दी को आते देखकर लोगों ने मार्ग छोड़ दिया। बान्दी देख भाल कर उलटे पाओं वापस आ गई।

सुन्दरी ने पूछा——————"क्यों ? गंगा क्या है।"

गंगा ने कहा——————"बाई जी ! क्या कहुं। एक लड़का गाड़ी के नीचे आगया है। लड़का क्या है ? जैसे कोई राजकुमार——————आयु भी कोई लग भग चौदह वर्ष की होगी।"

——————"अबतक सुध नहीं आई।"

——————"जी नहीं।"

बान्दी बाज़ार की ओर देखकर कहने लगी—————— "किसका लड़का है ! मालूम नहीं। माता-पिता सुनें तो पहाड़ टूट पड़े।"

सुन्दरी ने कहा——————"गंगा ! तू एक काम करेगी ? जाकर चौकीदार से कहदे कि वह लड़के को यहां पहुँचादे। इतने मनुष्य एकत्र होकर केवल तमाशा ही देख रहे हैं। किसी से यह भी तो नहीं होता, कि उस लड़के को किसी सुरक्षित स्थान में पहुँचादें।"

——————"नहीं वह केवल तमाशा ही देख रहे हैं।"

——————"तू जा और उस कांस्टेबल से कहकर उस लड़के को यहां उठवा ला। एक रुपया इनाम मिलेगा।"

बान्दी चुपचाप चली गई।

———

नौकर बर्फ और सोडे की बोतल ले आया। बिजली ने रो
के सिर पर बर्फ रक्खी ठीक उसी समय किसी ने बाहर
आवाज़ दी————"बिज्जू!"

साथ ही गंगा ने आकर कहा————"बाई जं
नारायण बाबू पधारे है।"

नारायण बाबू एक गाओं के प्रसिद्ध ज़िमींदार थे। जि
प्रकार उनकी उँगलियो में पड़ी सोने की अँगूठियो में र
जवाहरात जगमगा रहे थे। उसी प्रकार उनका नाम भी रो
था। कलकत्ता के कई रंगशालों में उन के नाम पर एक ब
सदैव और हर समय रीज़र्व रहता था। जिस दिन
अपने प्रिय बन्धुजनो को लेकर रंगशाला में अभिनय दे
जाते थे। उसी दिन कम्पनी का मैनेजर हर समय उनकी से
में उपस्थित दिखाई देता था। इसके अतिरिक्त उनके कमरे
उनके मित्रो और बन्धुजनों का जमघट रहता था।

नारायण बाबु को मोटर में आते देखकर गंगा उलटे पा
बिजली के पास आई। किन्तु जब उसने देखा कि वह अब
द्वार पर खड़े हैं। उन्हें कमरे में आने की आज्ञा नहीं मिल
तब उस ने बिजली से बहुत कुछ कहा सुना। इस पर उ
कहा।

————"उन से कह दो।"————

गंगा चुप थी। उस के आश्चर्य्य का कोई ठिकाना न
————यदि सब संसार उस समय पलट जाता————
आकाश टूट पड़ता————पाओं तले से भूमि नि
जाती, तो भी गंगा इतनी चकित न होती। उसने स

ाई जी ने सुना ही नहीं————उन्हें धोखा हुआ । इस
ऽये फिर बोली———— "बाई जी ! नारायण बाबू पधारे
।"

बिजली ने कहा:————"आये हैं तो क्या नाचना
ोगा ? उनसे कह दो कि जायें। आज मुझे यह सब बातें
च्छी नहीं लगतीं।"

गंगा बिजली की भान्ति चमक कर बाहर आई । उसे
ाजली पर क्रोध आरहा था। महान पुरुष जिस प्रकार नीच
धम मनुष्यों पर बहुत शीघ्र दयालू हो जाते हैं। इसी प्रकार
न्हें पलटते भी देर नहीं लगती। वह बहुत शीघ्र असन्तुष्ट
। जाते है। उसने शीघ्रता से सब बातें नारायण बाबु को
ह सुनाईं। फिर उनको सम्बोधित करके कहने लगी।
बाबुजी ! आप अन्दर कमरे में पधारें। देखो तो बाई जी
सा पागलपन कर रही हैं। सब बुरा भला कह रहे हैं परन्तु
न्हें इस बात की तनिक भी चिन्ता नहीं।"

नारायण बाबु ने कहा————"जाऊंगा।"

परन्तु उन की आंखों से नम्रता टपक रही थी।

गंगा ने कहा————"जाओ शीघ्र जाओ ! वह सर्वथा
सुध है। उन्हें तो इस समय अपने शरीर की भी सुध नहीं।
या अचम्भा है आपको देखकर उन्हें कुछ सुध आजाये।"

नारायण बाबु धीरे धीरे कमरे की ओर चले । बिजली
स समय उस रोगी लड़के का टम्परेचर ले रही थी । एका-
चोरों के समान नारायण बाबु को कमरे में प्रवेश करते
देखकर बोली !————"कौन" ?

———————"मैं"———————।

उस समय नारायण बाबू की आवाज़ थर थरा रही थी। उस को सुन कर कठोर से कठोर हृदय भी पिघल कर मोम हो जाता। परन्तु बिजली पर तो उस समय भूत सवार था। उसपर उस आवाज़ का कुछ भी प्रभाव न पड़ा। वह कठोर स्वर में बोली———————"मैं ने तो जाने को कहा था।"

———————"बिज्जू ! मैं जाता हूँ"। नम्र दृष्टि से नारायण बाबू ने बिजली के बदले हुए चेहरे की ओर देखा। बिजली ने नारायण बाबू की ओर न देखते हुये पुकारा——————— "गंगा।"

गंगा आई। बिजली ने कहा———————"थोड़ी बर्फ तोड़ दो और मेरे बक्स से एक साफ़ तौलिया निकाल कर मुझे दे जाओ।"

गंगा ने सोचा था न जाने उसे कितनी गालियां सुननी पड़ेंगी। परन्तु वह बच गई। कमरे से बाहर आकर उसने सन्तोष की गहरी सांस ली। जान बची लाखों पाये।

नारायण बाबू ने कहा———————"बिज्जू ! कहो तो एक नर्स लादूँ ?"

———————"नहीं कोई आवश्यकता नहीं।"

———————"तुम्हें कठोर कष्ट का सामना करना पड़ेगा कहीं तुम ज्वर में ग्रस्त न हो जाओ।"

बिजली ने इस बात का कुछ उत्तर नहीं दिया।

नारायण बाबू ने चारों ओर एक बार दृष्टि दौड़ाई। और चुपचाप पलंग के पास खिसक आये। बिजली की ओर प्रेम

भरी दृष्टि से देखते हुए बोले————"बिज्जू ! तुम देवी हो।"

बिजली ने रूखी हंसी हसते हुये कहा————"आज आप वापस तशरीफ़ ले जायें। अब कुछ दिनों तक मैं आपसे नहीं मिल सकूंगी। आप व्यर्थ कष्ट न उठायें।"

————"मैं तुम्हें एक बार देखने अवश्य आया करूँगा यदि कहो तो किसी योग्य अंग्रेज़ डाक्टर को अपने साथ लेता आऊँ।"————नारायण बाबू ने कहा।

बिजली ने उत्तर दिया————"जिस डाक्टर का इलाज आरम्भ किया गया है। उस से पूछे बिना किसी और डाक्टर का बुलाना उचित नहीं।" ठीक उसी समय गंगा ने बर्फ और तौलिया लिये हुये प्रवेश किया।

बिजली ने कहा————"ज़रा लेम्प दिखादे नारायण बाबू नीचे जायेंगे।"

बिजली के मुख से यह शब्द सुनकर नारायण बाबू ने अब वहां ठहरना उचित न समझा।

यह सोच कर कि कहीं बिजली बिगड़ न जाये और मैं सदैव के लिये उसके अथाह प्रेम से वञ्चित न हो जाऊँ, वह धीरे धीरे पग उठाते हुये कमरे से बाहर होगये।

गंगा उनके पीछे पीछे चली। उसके हाथ में हरीकेन लालटैन थी।————क्रोध से वह थर थर कांप रही थी। उसके पांच रुपये भी नारायण बाबू के इस प्रकार निराश लौट जाने से मिट्टी में मिल गये।

———

(४)

दूसरे दिन संध्या के समय, रोगी के पलंग के पास छोटी सी मेज़ पर नाना प्रकार के फल रक्खे हुये थे। बिजली कांच के गलास में अंगूर का शरबत बना रही थी। एकाकिनी बेसुध लड़के ने करवट बदल कर पुकारा ————"मां।"

बिजली सब कुच्छ छोड़ कर रोगी के बिस्तर के पास आ खड़ी हुई। यूडी-कलीन की पट्टी बना कर उसके सिर पर फेरने लगी। लड़के ने एक गहरी सांस ली और आंखे खोल दीं। तत् पश्चात अपनी पथराई हुई आंखों से जहां तक होसका, उसने चारों ओर दृष्टि दौड़ाई। और विस्मय से दृष्टि डालते हुये धीरे धीरे फिर आंखें बन्द करलीं।

बिजली हर्ष से कपड़ों में फूली न समाई। उसका परिश्रम अकारथ नहीं गया। उसका प्रयत्न ठिकाने लगा।

अब उस लड़के के बच रहने की बहुत कुछ आशा बन्ध चुकी है।

प्रात:काल डाक्टर ने कहा था यदि संध्या तक उसे कुछ सुध आगई, तो उसके बच रहने की बहुत कुछ आशा हो सकती है। और यदि उस को सुध न आई, तो उस का बच रहना कठिन है। अब उस लड़के को कुछ सुध आई है।

एक ठंडी सांस लेकर बिजली कांच का गलास उठा लाई। और रोगी के पास ले जाकर बोली————"तुम इसे पीलो।"

लड़के ने हां—नहीं कुछ नहीं कहा।

बिजली ने दूसरी बार कहा————"पीलो इसे पीलो।"

लड़के ने आंखे खोलीं————उसकी आंखें भयभीत मृग की भान्ति भयभीत हो रही थीं।————"कौन" ?

यह क्या ? सर्वाङ्ग पूर्ण अपूर्व सुन्दरी————उस जैसे अभागे लड़के की इस प्रकार सुश्रुषा कर रही थी।

"नहीं यह स्वप्न है।" उसने फिर आंखें बन्द करलीं।

परन्तु नहीं यह कोमल और सहायक हाथ———— इतना प्रेम इतना स्नेह————यह क्या स्वप्न हो सकता है। कदाचित नहीं।

उसके घुंघराले खुश्क बाल मस्तक पर पड़े हुये थे। बिजली ने इन बिखरे बालों को मस्तक से हटाते हुये कहा —"लो! इसे पीलो।" यह प्रेम भरा स्वर————

लिये तैयार हो रही थीं।————उस ओर के दृश्यो पर अकस्मात उस के देखते देखते एक काला पर्दा पड़ गया। सहसा रमन की ओर उस की दृष्टि गई। रमन उसके मुख की ओर ध्यान से देख रहा था। बिजली ने आंखे नीची करलीं। और केशो पर आंचल डाल लिया।

रमन ने कहा————"मैं कब जाऊंगा।"

————"कहां जाओगे? तुम्हारे माता-पिता कहां रहते हैं। उन्हें सुचना देनी होगी। इन दिनो में तो इतनी बड़ी बात की ओर ध्यान तक नहीं गया। तुम्हारे माता-पिता कहां रहते हैं। मैं अभी आदमी भेज दू।"

मेरे माता-पिता जीवित नहीं है। मै एक अनाथ बालक हूं।"

————"तो और कौन है? बताओ।"

————"मेरा और कोई भी नहीं"। इस संसार में ऐसा कोई मनुष्य नहीं जिसे मै अपना समझूं"।

————"कहां रहते थे।"

————"क्या बताऊं? आज तीन दिन हुये इस शहर में आया था। मेरा घर गाओ में है।"

————"यहां कैसे आये? और उस दुकान पर तुम्हारा क्या काम था। यह बताओ तो?

रमन कुछ देर तक चुप पड़ा रहा उस के मुख से कोई बात न निकली। बिजली उसी ओर दृष्टि जमाये रमन को धयान से देखती रही————इस सुन्दर और भोले चेहरे पर दुर्भाग्य ने कैसी गहरी काली लकीर खैंच दी है।

काल चक्र के कठोर हाथों ने मास को नोच कर हड्डियों के पिंजर को किस प्रकार खड़ा कर दिया है। एकाकिनी रमन की आवाज़ से वह चौंक पड़ी————रमन उस समय अपने दुर्भाग्य की कथा सुना रहा था।

वह गॉवो के किसी ब्राह्मण कुल का बालक है। पिता की बात याद नहीं आती। माता की गोद में पल कर नाना के घर में वह इतना बड़ा हुआ है। उस समय नाना की धन-स्थिति कुछ बुरी न थी। इधर उधर कथा करके वह अपनी दुर्भाग्य विधवा लड़की————निर्मल प्रभा और उनके अकलोते पुत्र————रमन के साथ किसी प्रकार जीवन व्यतीत करते रहे। ईश्वर की इच्छा एक दिन माता का भी देहान्त हो गया। रमन की आयु उस समय आठ वर्ष की थी। बूढ़ी नानी ने किसी न किसी प्रकार कष्ट या दु:ख से उस बुरी दशा में भी उस का पालन पोपन किया। माता की यह बड़ी अभिलाषा थी, कि उसका पुत्र रमन शिक्षा प्राप्त करे। और संसार में यश और कीर्ति प्राप्त करे। बूढ़ी नानी भी इसी चेष्टा में लगी रहती थी। परन्तु उस की सब कामनाये मिट्टी में मिल गईं। तीन मास के लम्बे रोग के पश्चात नानी भी इस संसार से चल बसी। उस की हार्दिक कामनाओं पर पानी फिर गया। मृत्यु शय्या पर पड़े हुये उसने कहा था, कलकत्ता के जनार्धन चौधरी की उसने किसी समय सहायता की थी। यदि रमन वहां गया, तो वहाँ उसे रोटियो की कमी नहीं रहेगी। वहां यह शिक्षा भी प्राप्त कर लेगा। जनार्धन चौधरी किसी दशा में भी रमन को कोरा उत्तर नहीं देगा।

इस भाव को सन्मुख रखकर गाओं की सर्व सम्पति ठिकाने लगाने के पश्चात्, रमन यहां आया था। स्यालदा स्टेशन पर आकर जब पहिले पहिल उसने यह कोलाहल सुना, तो उसके आश्चर्य की कोई सीमा न रही। इस के पश्चात जब उसका आश्चर्य कुछ कम हुआ, तो उसने कोट की जेब मे हाथ डाल कर देखा, रुपयों की छोटी सी थैली जेब खा गई———। बहुत ढूंढने पर भी वह न मिली। बेचारा ज़ार ज़ार रोने लगा। सैंकड़ो मनुष्य एकत्र हो गये। प्रश्न पर प्रश्न करने लगे। उत्तर में उस की दुःख भरी कथा सुन कर, बगोले की तरह कौन कहां उड़ गया, उसका कुछ पता न चला। सब एक एक करके भाग गये। दिन भर भूखा प्यासा रहकर बेचारा सारे शहर का चक्कर लगाने लगा। जो बाज़ार सामने आगया, उसने उसी का रुख किया, उसी बाज़ार में उसने प्रवेश किया। जो मनुष्य दिखाई दिया, उसने उसी से जनार्धन चौधरी का पता पूछा। किसी ने अनगणित गालियां सुनाई और किसी ने पल भर आकाश की ओर देख कर अपना मार्ग लिया। किसी ने उसके प्रश्नों का उत्तर देना भी अपना अनादर समझा। धूप की तेज़ी————भूख की अधिकता————रात की जागृति————मार्ग का भटकना————इन सब ने मिल मिला कर उसे किस मार्ग में डाल दिया————इस विषय में वह स्वयं भी कुछ नहीं जानता था। केवल उसे इतना ही याद था कि एक दुकान के सामने खड़ा हो गया था————उस समय उसे बहुत ज़ोर का ज्वर चढ़ रहा था। सारा शरीर गर्मी के मारे जल रहा था। प्यास के मारे

ओंठ सूख गये थे। सिर चकराता था। पाओं थक कर चूर हो गये थे।————पग उठाने की भी उस में शक्ति न थी। वहां से हिलना भी कठिन होगया था।————इस के पश्चात ————एक बून्द पानी कण्ठ से उतरते ही उफ! इतना सन्तोष————ऐसी शान्ति भी संसार में थी।

————एक बूंद पानी————परन्तु उस समय सिर चकरा गया। आंखों के सामने अन्धकार छा गया। इस के पश्चात चारों ओर अन्धकार ही अन्धकार दिखाई देने लगा।————कुछ दिखाई नहीं देता था। अन्धकार ————चारों ओर से अन्धकार ने उसे शान्ति मय गोद में छुपा लिया।

इस के पश्चात———— इस के पश्चात उस ने आंखें मल कर देखा। यह फूल की भान्ति कोमल विस्तर———— फूलों की भान्ति कोमल और सुकुमार हाथ———जैसे वह इन्द्रि की स्वर्गपुरी में आकर मृत्यु रहित शान्ति-दायक पंखड़ियों पर लेटा हुआ है। देखा————प्रकाश ही प्रकाश————आंखो को चुंधिया देने वाली बिजली का प्रकाश! कमरे का एक एक कोना जगमगा रहा था।

बिजली ने कहा—— ——"यहां से कहां जाओगे?"

—— ——"यह नहीं मालूम! जनार्धन चौधरी के घर का पता लगाऊंगा।"

————"यह कलकत्ता है! इतने बड़े शहर में जनार्धन चौधरी के घरका पता तुम्हें क्यों कर लगेगा। वह ...ल्ले में रहते हैं, यदि तुम्हें यह मालूम होता, तो पता

लगाना कुछ कठिन काम न था।

रमन की आंखों से टप टप आंसू गिर रहे थे। कैसे पता लगेगा?————कोई उपाय नहीं? इस से तो कहीं अच्छा था कि वह दो चार दिन और बिस्तर पर पड़ा रहता! ज्वर का कष्ट सहन करता और जो भी कष्ट होता, उसे प्रसन्नता पूर्वक सहन कर लेता।

जो किसी रोगी पर तरस खाता है। जो किसी को दुःख में देख कर उससे अपनी सहानुभूति प्रकट करता है, जो दयालु मनुष्य है, जो स्नेह की पुतली है, जो दूसरों को संकट अथवा कष्ट में देखकर दुःख के आंसू बहाता है, वही विपन्न मनुष्य को अपने यहां आश्रा दे सकता है। परन्तु अब तो वह स्वस्थ हो गया है। ऐसी दशा में उस को किसी के आगे सहायता के लिये हाथ फैलाना उचित नहीं————उसे अब दूसरो पर भार नहीं डालना चाहिये। इस देवी ने उस के लिये जो कुछ भी किया है, वह एक बड़ी सेवा है। अधिक से अधिक मनुष्य यही कर सकता है, जो इस देवी ने किया है। रमन जब तक जीवित रहेगा इस देवी का कृतज्ञ रहेगा। यदि यही देवी यह कहदे कि पुत्र अब तुम रोग से मुक्त हो गये हो————अब तुम स्वस्थ हो। अपना मार्ग लो, तो इस में किसी को कुछ कहने सुनने का साहस हो सकता है?————हाये! इस से तो यही अच्छा था कि मुझे मृत्यु आ जाती————रमन ऐसा सोचने लगा।

बिजली ने कहा————"यदि ईश्वर करे, तुम्हें जिर्नाधन चौधरी के घर का पता लग भी जाये, तो क्या तुम्हारी

इच्छा कहीं नौकरी करने की है ?"

————"मेरी माता की यह हार्दिक कामना थी कि मैं शिक्षा प्राप्त करूं।"

————"अच्छा है यही करो।"

रमन के सूखे ओंठों पर थोड़ी देर के लिये मुसकराहट की झलक दिखाई दी। परन्तु मुख से एक भी शब्द नहीं निकला।

बिजली ने कहा————"मैं तुम्हारी शिक्षा का प्रबन्ध कर दूंगी। तुम पढ़ो लिखो ताकि तुम्हारी माता की कामना पूर्ण हो।"

रमन की कृतज्ञ आंखों से श्रद्धा के आन्सुओं का समुद्र उमड आया। उसने संदेह भरे लहजे में कहा————"मां।"

"छी! 'मां' न कहो! इस पवित्र शब्द 'मां' को मुख से निकाल कर इसे अपवित्र न करो।"

रोते रोते रमन ने फिर पुकारा————"मां"————

विजली तड़प उठी। उस की चमकीली आंखों में मोती झलकने लगे। थोड़ी देर चुप रहकर बोली————"तुम मुझे 'मां' कहते हो!————छी! बाज़ारी स्त्री-वेश्या को भी भला कोई मां कहता है ?"

जिस प्रकार अथाह सागर में डूबा हुआ, कोई मनुष्य किसी तरह अपनी शक्ति अनुसार हाथ पैर मार कर किनारे पर आ जाता और थकावट से चूर चूर हो जाता है। यदि कोई धक्का देकर उसे फिर पानी में गिरादे, उस समय उस मनुष्य की जो दशा होती है ठीक वही दशा रमन की हुई। उस के घायल हृदय में न जाने किसने सैकड़ों हथौड़ों से एक

साथ चोटें लगाना आरम्भ कर दिया ।

बिजली ने सम्भल कर कहा——————"केवल इसी लिये तुम्हें किसी अन्य स्थान पर रहना पड़ेगा । मैं तुम्हें अपने पास ही रख लेती, परन्तु यह असम्भव है । यहां—————— कलकत्ता में लड़कों के कितने ही बोर्डिंग हाउस हैं, तुम्हें इन्हीं में से किसी एक में रहना होगा । रुपये के लिये तुम्हें कुछ चिन्ता नहीं करनी पड़ेगी, इस का प्रबन्ध मैं कर दूंगी । वहां तुम्हें किसी प्रकार का कष्ट नहीं होगा । हां एक बात है——————तुम यहां न आने पाओगे । कदाचित् न आने पाओगे ! केवल यही नहीं ? यदि मैं स्वयं भी तुम्हें कभी बुलाऊं तो भी नहीं"—————— ।

रमन की आंखों से आंसुओं का तार बन्ध गया । उसने रोते रोते हर्ष भरे स्वर में कहा——————"मां"—————— ।

(६)

आठ दस दिन के पश्चात् रमन को स्कूल बोर्डिंग हाऊस में भेज कर बिजली स्वयं को अधम और अपने जीवन को अकारथ समझने लगी। वह रमन के वियोग की वेदना अनुभव करने लगी। उसके चले जाने से उसे ऐसा प्रतीत होने लगा मानों उसके शरीर का कोई अंग खो गया है। पास के मकान से उस जैसी किसी दुर्भाग्य बाज़ारी स्त्री ने हारमोनियम बजाते हुये, तान लेना आरम्भ किया।

प्रीतम मेरी गली में आ,
तरसत तरसत जुग बीते हैं,
आ और न अब तरसा,
प्रीतम मेरी गली में आ॥

रो रो सूखियां मेरियां अखियां,
आ अब तो प्यास बुझा।
प्रीतम मेरी गली में आ॥
घुल घुल मन की आस है टूटी,
आ मन की आस बन्धा,
प्रीतम मेरी गली में आ॥

बिजली एक कौच पर पड़ी चुपचाप राग सुनने लगी।

हृदय में किसी गुप्त विचार ने करवट लेना आरम्भ किया। सामने वाली खिड़की से नीला आकाश दिखाई दे रहा था।————वह उस की ओर देखने लगी————शुद्ध निर्मल नीला आकाश————उस पर चान्दनी रात——कैसा मन मोदक————हृदय आकर्षक दृश्य है।

उसके पश्चात् उसने कमरे की प्रत्येक वस्तु पर दृष्टि डाली।————अमोद-प्रमोद की सब सामिग्री से सुसज्जित कमरा————

पास वाले मकान में उस समय भी राग रंग हो रहा था।

प्रेम किया दुःख पाया——पगले।
प्रेम किया दुःख पाया॥
प्रेम का जिसने दीया जलाया।
अपना जीवन दीप बुझाया।
प्रेम नगर में प्रेम डगर में,
यही है होता आया————पगले
प्रेम किया दुःख पाया॥
प्रेम की बीना मृग फंसाया।

प्रेम पतंग ने प्राण गंवाया।
प्रेम की अग्नि जिस तन लागी।
वह तन फूंक जलाया————पगले
प्रेम किया दुःख पाया॥
प्रेम ने माया जाल बिछाया।
इस माया ने मन भरमाया।
प्रेम के कान्टे पर प्रेमी ने,
फूल का धोका खाया————पगले
प्रेम किया दुःख पाया॥

बिजली सोचने लगी। अपनी बाल्य अवस्था की बातें। ————यह कितने दिनो की बात है। क्या उसने अपने बीते हुये जीवन में प्रकाश की कोई झलक नहीं देखी थी।—नहीं यह तो केवल मृग तृष्णा के सदृश————

बाल अवस्था में उसका जीवन निश्चिन्तता का जीवन था। और उसके हृदय में ऐसी कोई लालसा न थी, जिसको पूरी करने की उसको चिन्ता हो। उसके पश्चात्———— वही विवाह की रात————वह हर्ष से कपड़ो में फूली न समाती थी। उसके हृदय में कितनी ही आशाओं ने जागृत होकर स्थान प्राप्त कर लिया था।————और उसे चारो ओर कैसा प्रकाश दृष्टि गोचर होता था। इसके पश्चात वह आनन्द दायक रात्री————प्रेम और सोहाग के गुप्त जालों को तार तार करके व्यतीत होती चली गई————और वह स्वप्न सच्चे तो नहीं हुये————इस के पश्चात एकाकिनी आशाओ का सुन्दर मनोहर उद्यान भी काल चक्र की अग्नि में जल कर राख हो गया। और एक

७

गा ओ में यह समाचार पहुंचते देर न लगी। जब गाओं वालों ने सुना कि चन्द्र नगर के जिमींदार चन्द्रकान्त चौधरी ने ज्योतिन मयी के साथ अपने पुत्र का सम्बन्ध करने के लिये अपना मन्त्री भेजा है। उस समय उन के मुख से सहसा "हाये! हाये!! का शब्द निकल गया। यह बात न थी कि लोगोंने इस बात से प्रसन्नता प्रकट न की हो। "ऐसी सुन्दर कन्या!" आह राज रानी हो"। यह बात भी सब को भली प्रकार मालूम थी, कि चन्द्रकान्त चौधरी बड़ा धनवान है। उसकी राजाओं की सी धाक बन्धी हुई है। चन्द्रकान्त के पुत्र लक्ष्मीकान्त के साथ ज्योतिन मयी का विवाह शीघ्र होने वाला है, जब यह बात गाओं के एक

थी। एक सुन्दर अप्सरा। किसी ने स्वप्न में भी न देखी होगी। गाओं की उच्चकुल की बहु बेटियों ने किस प्यार और सन्मान से उसके पढ़ाने लिखाने का भार अपने सिर पर लिया था। वह सब की सब उस के सौन्दर्य को अनुराग की दृष्टि से देखकर, उस के प्रेम में मुग्ध होकर,उस पर अपना तन मन निछावर करती थीं। पढ़ने लिखने में वह कैसी होश्यार थी। सब देखकर चकित रह जाती थीं। वह जिस ओर निकल जाती थी। लोग आंखें बिछा देते थे।
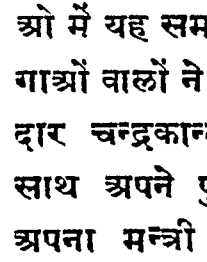
नवयुवक पुरुषों का जमघटा, ज्योति को अपने हृदय मन्दिर में स्थान देकर, उसे देवी के समान पूजने और देखने के लिये व्याकुल दिखाई देता था।

"ज्योतिन मयी" बृद्ध को देखकर उस के समीप गई। बृद्ध ने कहा————"पुत्री! तुम भट्टाचार्य्य की पुत्री हो।"

ज्योतिन मयी ने कहा————"हां! क्या आप उन्हीं की खोज में हैं!————मेरे साथ आइये।"

ज्योतिन मयी की ओर ध्यान की दृष्टि से देखकर बृद्ध ने कहा————"यह कन्या तो साक्षात् लक्ष्मी का स्वरूप है। मुझे पूर्ण बिश्वास है कि मेरा यहां आना अकारथ नहीं जायेगा।"

७

गा ओ में यह समाचार पहुंचते देर न लगी। जब गाओं वालों ने सुना कि चन्द्र नगर के जिमीं-दार चन्द्रकान्त चौधरी ने ज्योतिन मयी के साथ अपने पुत्र का सम्बन्ध करने के लिये अपना मन्त्री भेजा है। उस समय उन के मुख से सहसा "हाये ! हाये !! का शब्द निकल गया। यह बात न थी कि लोगोंने इस बात से प्रसन्नता प्रकट न की हो। "ऐसी सुन्दर कन्या !" आह राज रानी हो"। यह बात भी सब को भली प्रकार मालूम थी, कि चन्द्रकान्त चौधरी बड़ा धनवान है। उसकी राजाओं की सी धाक बन्धी हुई है। चन्द्रकान्त के पुत्र लक्ष्मीकान्त के साथ ज्योतिन मयी का विवाह शीघ्र होने वाला है, जब यह बात गाओं के एक

दो मनुष्यों ने सुनी, तो वह जल कर कोयला हो गये। उन्होंने सोचा था कि अपने पुत्र का ज्योतिनमयी से नाता कर अपने अन्धेरे घर को रोशन करेंगे। परन्तु जब उन्होंने सुना कि चन्द्रकान्त चौधरी इस मैदान में कूद पड़े हैं, तो फिर उन में से किसी को भी मधुसूदन भट्टाचार्य्य से इस बात की चर्चा करने का साहस न हुआ। कहीं उन्हें मुंह की न खानी पड़े, इस विचार से उन्होंने मधुसूदन भट्टाचार्य से इस विषय का वर्णन करना उचित न समझा। उनकी हार्दिक अभिलाषा उनके हृदय में ही दबी की दबी रह गई।

मधुसूदन भट्टाचार्य्य चन्द्रकान्त गौधरी की ओर से विवाह का यह संदेश सुनकर कुछ विस्मय न हुये।——— और इस में आश्चर्य की बात ही क्या थी। अपनी पुत्री का विवाह किसी उच्च और धनवान कुल में करने का भाव हृदय में पहिले ही समाया हुआ था। यही कारण था कि वह अपनी पुत्री को युवावस्था में पहुंचा हुआ देखकर भी, निश्चिन्तता पूर्वक दिन व्यतीत करते थे। ज्योति एक अपूर्व सुन्दरी थी। उस के रहने के लिये किसी उच्च और धनवान ज़िमींदार का घर चाहिये। वह इस योग्य थी कि राजकीय ठाठ बाठ से अपना जीवन व्यतीत करे। ज्योति को आमोद प्रमोद की सब सामिग्री क्यों प्राप्त न होगी? वह क्या असाधारण कन्या थी? क्या उसका रंग रूप कुछ ऐसा वैसा था।

बात चीत होते ही बात पक्की होगई। विवाह की बात तै होगई। और अन्त एक दिन विवाह की सर्व आवश्यक रसमें अदा की गईं। ज्योतिन मयी का पानी ग्रहण कराया गया।

जब ज्योतिन मयी सुसराल जाने लगी, तो सब ग्राम निवासियों ने उसके वियोग का दुःख अनुभव किया।

परन्तु हेमन्त ने ज्योति के वियोग का दुःख सब से अधिक अनुभव किया। हेमन्त कलकत्ता के किसी कालिज में बी. ए. श्रेणी में पढ़ता था। मधुसूदन भट्टाचार्य्य के घर के समीप ही उस का घर था। हेमन्त के पिता कलकत्ता के किसी दफ़्तर में हेड क्लर्क थे। वह वहां भाड़े के मकान में रहते थे। छुट्टियों के दिनों में वह प्रायः गाओं आया करते थे। और पांच सात दिन रहकर वापस कलकत्ता चले जाते थे।

पहिले तो हेमन्त गाओं आने में अनेक प्रकार के बहाने बनाया करता था। उजाड़ गाओं——गंवार लोग———अशिक्षित मनुष्य! सन्मान करना क्या जानें बात चीत करने की तमीज़ नहीं। लौट फेर कर वही खेती बाड़ी की बातें? इन लोगों में रहन सहन करके क्या कोई सुशिक्षित मनुष्य भली प्रकार अपना जीवन व्यतीत कर सकता है?

उधर हेमन्त के पिता घरेलू धन्धों में कुछ ऐसे व्यस्त थे कि उन्हें गाओं जाने का अवकाश ही नहीं मिलता था। इस वर्ष कलकत्ता में एक नवीन रोग प्रकट हो गया। सब लोग शहर छोड़ कर इधर उधर भागने लगे। हेमन्त भी अपने प्रिय बन्धुजनों को साथ लेकर गाओं में चला आया।

उस मन्दभाग्य उजड़ गाओं में भी उसे एक मन मोदक हृदय आकर्षक व्यक्ति दृष्टि गोचर हुई। वह और कोई न थी!————"ज्योतिन मयी!" हेमन्त को उस से प्रेम हो

गया। इसलिये जब कभी उसे अवसर मिलता घर दौड़ आता। चाहे वह वहां दो तीन दिन ही क्यों न रहे। किन्तु वह ऐसा अवसर कभी हाथ से जाने नहीं देता था।

इस आकर्षण शक्ति का कारण "ज्योति" थी। इस समय ज्योति ने तेरहवें वर्ष में पग रक्खा था। इस छोटी सी आयु में भी ज्योति का यौवन चोहदवीं के चान्द की भान्ति फटा पड़ता था। बनाओ श्रृन्गार की सामिग्री देखकर युवावस्था ने भी अपनी सब रंगीनी हृदय खोल कर इस प्रकार रग रग में भर दी थी, कि यदि "ज्योति" अन्धकार में भी सन्मुख आजाती, तो अन्धो के हृदय में भी उसके देखने की लालसा उत्पन्न हो जाती।

ज्योति के सौन्दर्य-सागर में तरंगें ठाठें मार रही थीं।

हेमन्त ने एक दिन ज्योति के सौदर्न्य की वह झलक देखी देखते ही देखते हृदय हाथ से जाता रहा। मिस्तरियों और राजों के कार्य्य में दोष निकाल कर, उस ने मकान की मरम्मत में आसाधारण देर लगा दी। मरम्मत का कार्य बढ़ गया और अब वह नित्य प्रति घर आने लगा।

परन्तु केवल ज्योति को देखकर, हेमन्त के हृदय को सन्तोष प्राप्त न होता था। ज्योति से दो चार प्रेम भरी बाते करने की उस के मन में बड़ी लालसा थी। परन्तु उस की हार्दिक कामना पूर्ण होने की आशा कहाँ ?

अन्त शुभभाग्य से घोर प्रयत्न के पश्चात हेमन्त को ज्योति से बात चीत का सिलसिला आरम्भ करने का एक अच्छा अवसर मिल गया। संध्या का समय था। ज्योति

अपनी किसी सहेली के घर से वापस आ रही थी। और हेमन्त उस समय वायुसेवनार्थ बाहर जारहा था। ज्योति को दूर से देखकर, हेमन्त ने सोचा यह अवसर तो अच्छा हाथ आया किन्तु————किन्तु————

सहसा ज्योति चिल्ला उठी। हेमन्त उस समय अपनी धुन में मस्त चला जारहा था। ज्योति के इस प्रकार चिल्लाने से वह ठहर गया। जब उस ने देखा कि एक गाये रस्सा तोड़कर ज्योति के पीछे पीछे आरही है, तो उस ने दौड़कर उस गाय का रस्सा पकड़ लिया। गाय रस्सा हाथ में आते ही खड़ी हो गई। गाय को वृक्ष के साथ बान्ध कर हेमन्त ने दौड़ते हुये आकर कहा ————"डरो मत ! घर जाओ"।

ज्योति हांपती हुई घर की ओर चली। हेमन्त चुप खड़ा था। उसे अपने तन बदन की भी सुध न थी। उस की सुध बुध लुप्त हो गई थी ज्योति जब चली गई, तब उसे सुध आई उसकी आंखें खुलीं। उस समय उस ने सोचा कि इस डरपोक और नीच हृदय को उसने ईटं से चूर चूर क्यों न कर दिया नादान छोकरे की भान्ति उसने सब सुख————आनन्द मिट्टी में मिला दिया। यह ऐसा नादान है कि इसने एक ऐसा सुनहरी अवसर हाथ से खोदिया। क्या अच्छा होता,यदि वह थर थर कांपती हुई ज्योति का हाथ पकड़ कर उसे उस के घर तक पहुंचा देता। हाये रे ! इतनी बड़ी नादानी करके वह क्या कर बैठा।

हेमन्त वहां पल भर भी न ठहरा। उसने मधु सूदन भट्टाचार्य के घर का मार्ग लिया। मधुसूदन भट्टाचार्य्य के घर

पर पहूच कर उसने पुकारा———"भट्टाचार्य्य महाशय!———

भट्टाचार्य्य जी उस समय घर पर मोजूद न थे। उन की स्त्री ने अन्दर ही से पूछा———"कौन है?———

———"मै हेमन्त हूँ। आप के पड़ोस में रहता हूँ"।

———"सुशील बाबु का पुत्र———हेमन्त!

———"जी—हां!

———"अन्दर आ जाओ न बेटा! तुम तो अपने ही लड़के हो"।

हेमन्त ने कांपते हुये द्वार पर पग रक्खा। उस समय ज्योति अपनी माता के पास बैठी हुई थी। और माता दीपक जलाने की तैय्यारियां कर रही थी।

हेमन्त ने कहा———"आपकी पुत्री आज बाल बाल बच गई है। एक गाय ने पीछा किया था"।

———"समझ गई, तभी तो हांपती हुई आई थी"।

ज्योति उस समय भी हांप रही थी।

———"चाची जी। मैं मार्ग में ही था।

———"पुत्र! जीवित रहो! चिरञ्जीव हो!! राजा हो!!! क्यों ज्योति तुने मुझ से इस बात का कोई वर्णन तक नहीं किया"।

ज्योति क्या कहती! वह भुमि की ओर देखती हुई चुप बैठी रही।

———"ज्योति राजरानी"! ———माता ने यह आशीर्वाद क्यों न दी? हेमन्त यही सोचता रहा। फिर थोड़ी

,र के पश्चात बोला—— ——"आप उसे अकेली क्यों जा,ती हैं" ?

"पुत्र ! गाओं की बात है। सब लड़कियां जाती हैं। यह भी चली जाती है"।

इस के पश्चात लज्जा से झिझकते झिझकते हेमन्त ने बातों का रंग और ही जमा दिया।

ज्योति सुशिक्षित है। घर के काम धन्धों में वह जैसी होशियार थी। पढ़ने लिखने में भी वैसी ही निकली है।—— विवाह के बारे में दो चार जगहों से बात चीत हो रही थी परन्तु उस के माता पिता की यह हार्दिक अभिलाषा थी कि ज्योति किसी अलपढ़ ब्राह्मण के पल्ले न पड़े। उसका विवाह किसी सुशिक्षित नव युवक से हो जाये, तो क्या कहना ————माता ने यह बात भी कह डाली।

बातों बातों में रात हो गई। माता ने कहा————जा पुत्री चूल्हा सुलगा————ज्योति चली गई ————उस के जाते ही हेमन्त का हृदय शीतल हो गया————"मैं भी अब जाता हूँ। हम लोग इस गाओं में अधिक नहीं रहते इस लिये हमें-घरेलू धन्धों से छुटकारा नहीं मिलता। या कोई विशेष कार्य्य हुआ, तो गाओं में आगये। नहीं तो खैर————यही कारण है कि हमें आपकी कुशलता का भी समाचार नहीं मिलता।"

भट्टाचार्य्य की स्त्री ने कहा————"अब कलकत्ता कब जाओगे ?

हेमन्त का विचार दूसरे दिन ही कलकत्ता चले जाने का

था, किन्तु इस नये परिचय के पश्चात उसने सोचा———— यदि दोचार दिन और यहां रह जाता तो अच्छा था। यह सोचकर बोला————"दो चार दिन में जाना ही होगा। कालिज की छुट्टियां भी समाप्त हो चुकी है।"

भट्टाचार्य्य की स्त्री ने कहा————अच्छा जब यहां आया करो, तो अवश्य मिल जाया करो। तुम्हारे बाबु जी तो जब कभी यहां आते हैं वह उन से (भट्टाचार्य्य जी से) अवश्य मिल जाया करते हैं। जिमींदारी के कामों में भी उन्ही से सम्मिति लिया करते हैं।

हेमन्त के अंधकारयुक्त हृदय में आशा को ज्योतिर्मय किरणों ने अकस्मात बिजली की भान्ति चमककर सर्व अन्धकार को दूर कर दिया। उस ने कहा—"कल अवश्य आऊंगा ————यदि प्रात:काल उन से भेंट हो गई तो————"

————"हां वह प्रात:काल घर पर ही होंगे।"

हेमन्त उठ खड़ा हुआ। जाते हुये बोला————"ज्योति के लिये कुछ पुस्तकें लाऊंगा। वह बड़े चाव से पढ़ा करती है।"

————"हां गाओं में अच्छी देखने योग्य पुस्तकें कहां मिलती हैं।

दो चार दिन क्या एक सप्ताह व्यतीत होगया। किन्तु हेमन्त ने कलकत्ता जाने का नाम तक न लिया। उसका गाओं में ऐसा मन लग गया कि कलकत्ता से पत्र पर पत्र आने लगे, किन्तु उसका गाओं छोड़ने को मन नहीं चाहता था, इस का कारण कोई मालूम न कर सका।

पत्रों के उत्तर में अन्त हेमन्त ने एक लम्बा चौड़ा पत्र

लखा। उसमें उसने लिखा था कि शहर में रहना व्यर्थ ।यहां सब लोग उसको सन्मान की दृष्टि से देखते हैं। नसे आंख छुपाना अच्छा नहीं। घर की देख भाल और रम्मत अच्छी प्रकार होनी चाहिये, जिस से कभी कभी र में आकर ठहरने में कोई कष्ट न हो।

हेमन्त का पत्र पाकर हेमन्त की माता ने अपने पति को सम्बोधित करते हुए कहा———"देखो न! मेरे हेमु को अब इन बातो का बोध हुआ है।"

ज्योति के साथ हेमन्त की खूब गाढ़ी छिनने लगी। प्रायः शिक्षा आदि की बातें होती रहती थीं। अंग्रेज़ी कविताओं और नाटको की कितनी ही कहानियां ज्योति ने हेमन्त से सुनी थीं। उसकी कोई गणना नहीं। हेमन्त के प्रेम भरे हृदय की छाप ज्योति के नवीन और कोमल हृदय पर भली प्रकार अंकित हो चुकी थी। हेमन्त से बात चीत करने से उसे इतना आनन्द मिलता था, मानो वह किसी नवीन मनोहर, मनमोदक स्थान की सैर कर रही है। सखियो की छोटी छोटा बातें अब उसके हृदय को लुभा नहीं सकती थीं। रात्री को वह बिस्तर पर लेटकर सोचा करती कि फिर कब प्रातःकाल होगा। हेमन्त आकर बात चीत करेगा। कहानी सुनायेगा। हेमन्त का हंस मुख चेहरा,उसकी बात चीत,किसी रंगीले और हृदय आकर्षक राग और जादू भरे नाच की भान्ति उस के हृदय को अपनी ओर खींचते थे।

ज्योति ने हेमन्त से अंग्रेज़ी की प्रथम पुस्तक पढ़नी आरम्भ की, तो भट्टाचार्य्य महाशय ने इस पर कोई आपत्ति

नहीं की। यदि लड़की उच्च शिक्षा प्राप्त करले, तो वर्तमान समय के नवयुवक रुपये पैसे की कुछ परवाह नहीं करते। यह बात उन के हृदय में भली प्रकार बैठ गई थी।

हेमन्त की ज्योति के साथ क्यों इतनी घनिष्ठता हो गई थी। यह कहना कठिन है। वह यह भली प्रकार जानता था कि उसका 'लोभी पिता" ज्योति के साथ उसका विवाह करने पर राज़ी नहीं होगा। यदि ज्योति के हृदय आकर्षक सुन्दर प्रकाश से सब संसार प्रकाशमय हो जाये, तो भी यह बात असम्भव है। ज्योति चाहे बी-ए की परीक्षा में पास हो जाये, फिर भी उसका विवाह हेमन्त के साथ कभी नहीं हो सकता। ऐसा होना असम्भव है।

फिर वह क्यों ज्योति से प्रेम करता है?————उसका कारण?——————युवावस्था में प्रेम की सुगन्धि पुरुषों के हृदय में उत्पन्न हो जाया करती है। उसी के प्रभाव से हेमन्त ज्योति को दृष्टि भर कर देखता था। ज्योति को देखते ही उसकी ललचाई हुई प्यासी आंखें उसकी आंसू भरी आंखों से टकर खा जाती थीं। उसे देख कर और उस से बातचीत करके जो अथाह आनन्द वह अनुभव करता था, वैसी प्रसन्नता उसे संसार की किसी अन्य वस्तु से प्राप्त होनी असम्भव थी।

ज्योति के साथ उठने बैठने और उससे बातचीत करने से उसके आशा युक्त हृदय पर एक अद्भुत रंग चढ़ गया था। किन्तु उसके साथ ही साथ निराशा की जो एक काली रेखायें भी उस रंग को भद्दा बना देती थीं।

"नहीं मिलेगी ! नहीं मिलेगी !!" यह बातें बीच बीच में उसके इस अनोखे सन्तोषजनक हृदय और आशाओ के हृदय आकर्षक उद्यान में आग लगा देती थीं।

एक सप्ताह और व्यतीत होगया। परन्तु हेमन्त ने कलकत्ता जाने का नाम तक न लिया। अन्त में उसके पिता का एक और पत्र आया। उस में लिखा था "कि कालिज से छुट्टियां लेकर घर की मरम्मत कराने की आवश्यकता नहीं। पत्र देखते ही कलकत्ता चले आओ।"

हेमन्त मन ही मन में अपने भाग्य पर आंसू बहाने लगा दिन भर वह घर से बाहर न निकला। चुपचाप उदास चित्त कमरे में पड़ा रहा। संध्या से कुछ देर पहिले वह उद्यान में आया। छोटी छोटी क्यारियो मे छोटे छोटे पौदे अनेक प्रकार के फूलो से लदे खड़े थे। आस पास मालियो के घर में न जाने कहां से ज्योति आती हुई दिखाई दी। पास आकर ज्योति ने धीमे स्वर से कहा———'आज उधर नहीं आये।"

हेमन्त केवल "नहीं" कहकर टकटकी लगाये ज्योति के मुख की ओर देखता रहा। सुन्दरी ज्योति न जाने किस शुभ भाग्य पुरुष के हाथ पड़ेगी। ज्योति जिस की होगी वह भिखारी होते हुये भी राजा कहलायेगा। उस पुरुष को संसार में किसी वस्तु की भी कमी नहीं हो सकती।

ज्योति ने कहा———"क्यो ?"

उस की इस बात में उदारता पाई जाती थी।

हेमन्त ने कहा———"ज्योति ! मैं कल कलकत्ता

चला जाऊंगा इस लिये उधर न आसका।"

————"चले जाओगे और फिर कब आओगे ?

————"नहीं कह सकता ? सम्भव है फिर न आसकूं।"

————ज्योति ने कुच्छ बात न कही। चुप चाप खड़ी रही।

एक ठन्डी सांस लेकर हेमन्त ने कहा————"ज्योति। कलकत्ता में भी मेरे हृदय में तुम्हारा खयाल आकर सताता रहेगा ? और सम्भव है कि वहां मेरा मन भी न लगे।"

ज्योति की आंखों में आंसु उमड आये। मुख से कोई बात न निकली।

हेमन्त उठ खड़ा हुआ। और ज्योति के दोनों हाथ पकड़कर बोला————"ज्योति!"

हेमन्त का समस्त शरीर प्रेम के आवेश से कांप रहा था। ज्योति ने भी यह आंखो से देख लिया था। वह सिर झुका कर बोली————"जी!"

हेमन्त ने पुनः पुकारा————'ज्योति!"

ज्योति ने जब हेमन्त के मुख पर आंसु भरी दृष्टि डाली, ठीक उस समय वृक्षो के पत्तो में सूर्य देवता की सुनहरी किरणे उसके मुख पर पड़ीं। आंसु मोती की भान्ति झलकने लगे। यह दृश्य देखकर हेमन्त को अपने तन बदन की सुध न रही। उसने पागलों की भान्ति ज़ोर से ज्योति को अपनी छाती से लगा कर उसके गुलाबी गालो पर एक रंगीन चुम्वन का चिन्ह लगा दिया। ज्योति चुप चाप खड़ी रही————

तनिक भी न झिझकी।

पत्थर की सुन्दर प्रतिमा की भान्ति वह अचेत खडी रही। उसका सिर लज्जा से झुक गया।

हेमन्त ने इस पागलपन में ही उसे पुन. अपनी छाती से चिपटा लिया। और धीमे स्वर से वह कहने लगा। "ज्योति!" मैं तुम्हें चाहता हुं। तुम्हें प्रेम की दृष्टि से देखता हूं!"

ज्योति अब भी कठ पुतली बनी खड़ी रही। अब हेमन्त को धीरे धीरे सुध आने लगी। वह कहने लगा। ——— ज्योति! तुम तो मुझे प्रेम नहीं करतीं?———तुम्हें तो मुझ से स्नेह नहीं।"

ज्योति ने उत्तर नहीं दिया। हेमन्त ने पुन कहा ———"बताओ ज्योति! मेरी प्यारी बताओ!!

ज्योति ने सिर झुका कर कहा———"हां मैं तुम्हें प्रेम करती हूं।"

———"मुझे भूल तो न जाओगी?

ज्योति इस का क्या उत्तर देती? इतनी बातें सुनने के के लिये वह तैय्यार न थी।

हेमन्त ने कहा———"यदि मेरे साथ तुम्हारा विवाह हो———।"

हेमन्त के इन शब्दों ने ज्योति के हृदय पर गहरा प्रभाव उत्पन्न किया। वह कांप उठी। उस का शरीर पसीना पसीना हो ग्या। एक बात भी उस के मुख से न निकल सकी। लज्जा ने अंधेकार की भान्ति इधर उधर से सिमठ सिमठा कर उस के शरीर के अंग अंग को घेर लिया था। ———वह

सोच रही थी————"काश! वह किसी प्रकार भूमि में समा जाती। विवाह! यह तो अत्यन्त लज्जा की बात है।"

ईश्वर ने उसकी मुक्ति का मार्ग निकाला। दूसरी ओर से किसी ने पुकारा————"ज्योति!"

————"आई।"

ज्योति ने कहा————"माता बुला रही है।"

यह कहकर वह पल भर वहां नहीं ठहरी। उलटे पैरों लौट आई। हेमन्त कुछ देर तक वहां चुप चाप खड़ा रहा। उस के पश्चात वह एक वृक्ष के तले बैठ गया। पृथ्वी तथा पाताल और न जाने कांह कहा के कितने ही गहरे विचारों ने उसके हृदय में हलचल मचा दी। जब वह वहां से उठकर घर की ओर जाने लगा तो रात हो चुकी थी।

(८)

उस रात हेमन्त को नींद नहीं आई। उस ने सारी रात करवटें लेते और तारे गिनते व्यतीत की। ज्योति के खयाल ने उसे बड़ी उलझन में डाल रक्खा था। एक बार उसने सोचा, कलकत्ता पहुंच कर वह अपनी माता से इस बात की चर्चा करेगा———कहेगा कि यदि उस का विवाह ज्योति के साथ कर दिया जाये, तो वह पढ़ने लिखने में असाधारण परिश्रम करेगा। और बी-ए पास करने के पश्चात्, नौकरी करके वह बहुत धन कमायेगा। दहेज की न्यूनता इस प्रकार पूरी हो जायेगी। परन्तु जब उस की दृष्टि पिता की ओर जाती, तो उस समय उस का हृदय फीका

पड़ जाता । वह यह बात भली प्रकार जानता था कि उस के पिता रुपये-पैसे पर किस प्रकार प्राण देते है ।———— उन्हें यह बात समझाना मनुष्य की शक्ति से बाहर था ।

प्रातः काल छाती पर पहाड़ का सा भार लाद कर जब वह घर से बाहर निकला, तो उसने देखा कि भट्टाचार्य्य के घर का द्वार अभी बन्द है । घर की टूटी-फूटी दीवार जिसकी कुछ ईंटें निकली हुई थीं, उसकी कल की करतूत पर चुप चाप खड़ी हुईं मुसकरा रही थीं ।

वही घर————आ हा हा————उस सुनहरी पुतली के रहने का घर————वही————प्रत्यक्ष प्रेम की सुगन्धि————सोई हुई सौन्दर्य की देवी———— ज्योति ! उसी टूटे फूटे, छोटे से घर में बिछौने पर पड़ी हुई सो रही है । उस के जीवन के अमोद-प्रमोद————भोग विलास की सामिग्री न मालूम कहां है । कौन जाने । कभी उसके अभिलाषी काना में प्रेमभरी आशा रूपी हृदय आकर्षक लोरियां भी सुनाई देंगी । अथवा उसके आशा रूपी वृक्ष का फल आंधी के तेज़ झोंकों से गिर और मुरझाकर यूंही भुमि में समा जायेगा ।

कलकत्ता आकर उसने देखा कि बाबु जी का मुख मंडल क्रोध के मारे लाल हो रहा है । पढ़ने लिखने से जी चुराने के कारण वह उस से अत्यन्त असन्तुष्ट थे । उधर उसकी यह दशा थी कि उसका हृदय व्याकुलता और सूक्ष्म लालसाओं की धुकती हुई अग्नि से ज्वाला मुखी पहाड़ बन रहा था । उसका हृदय चिन्ता————सागर की उठती हुई तरंगों

में पड़ा हुआ मन्झधार में पड़ी हुई नाव की भान्ति, हिचकोले खा रहा था।

फिर वही कालिज और व्याख्यान————चंचल हृदय प्रयत्न करने पर भी नवीन सिधे हुये घोड़े की भान्ति भड़क उठता था। व्याख्यानो में उस का मन नहीं लगता था। उस गुलाबी कमल की सूक्ष्म पंखड़ियां बार-बार हिल हिल कर उस को अपनी ओर खींच रही थी————ज्योति! ————सौन्दर्य की देवी————उसे स्वप्न दशा मे छोड़ आया था————वह कैसी है————कौन जाने? ————हां क्या मेरी स्मृति भी उस को इस प्रकार व्याकुल कर रही होगी————उस फुलवाड़ी के कुञ्ज में फूलों की उड़ती हुई सुगन्धि को, रुदन करती हुई ज्योति ने आकर अपनी चम्पाकली जैसी रंगीन और सुकुमार उंगलियों से छूकर, पौदो में सनसनी उत्पन्न कर दी थी। उस ने वहां खडे खड़े कितने ही ओस में नहाये हुये फूल चुनकर मिट्टी में मिला दिये थे————अब वह क्या कर रही है?————बगल में उदास और निराशा पूर्ण हृदय लिये हुये आंचल हिला हिलाकर वह अपनी सखियों के साथ इधर उधर फिर रही होगी। अथवा सरोवर के किनारे किसी वृक्ष की टहनी हाथ में लिये हुये आशा की देवी की भान्ति खड़ी खड़ी मुसकरा रही होगी।

सूक्ष्म शरीर ज्योति! उस दूरी पर बसे हुये गाओं के जंगल में————घर के पास————सोरोवर के किनारे घूम फिर कर थकावट से चूर चूर हो जाती होगी————

वही ज्योति की स्मृति के पवित्र चिन्ह, उसे मुक्त जी बाबु के व्याख्यानों से कहीं दूर लेजाकर किसी अज्ञात स्थान पर खड़ा कर देते थे।

ऐसी व्याकुलता——————इतनी आकुलता। इस प्रकार क्या कोई मनुष्य अधिक समय तक जीवित रह सकता है। किन्तु कोई उपाय————कुछ नहीं!

एक दिन उसने ज्योति को प्रेम पत्र लिखा। यह उस की हार्दिक लालसाओं, आकांक्षाओं, भावों तथा वासनाओं की प्रतिमा थी। उसने उसे छुपाकर जेब में रख लिया। सोचा, यदि मैं इस प्रकार का पत्र ज्योति को भेज दूंगा, तो प्रलय हो जायेगी। गाओं की बुरी अवस्था————गंवार लोग————ओछे मनुष्यों का क्या कहना! और फिर ऐसी निर्लज्जता की बात! छी! छी!! वह यह क्या सोचने लगा।

बाबु जी के कानो तक यह बात पहुंचते देर न लगी। यह डर गया। वह अपने पिता से इस प्रकार भय खाता था जिस प्रकार वे हथियार मनुष्य सिंह से भय खाता है।—— वह मेरे हृदय की बात क्या जानें?————मेरे हृदय की पीड़ा का उन्हें बोध कहां?————वह लोभ और मोह में फंस कर मेरी प्रत्येक वस्तु का पैसे से मूल्य लगाते हैं। वह प्रेम का मूल्य तथा आदर क्या जाने? जिस व्यापार में एक कौड़ी का भी लाभ न हो, बल्कि हानि ही हानि हो, उस व्यापार की उन से चर्चा करना व्यर्थ है। यह सोच कर उसने वह प्रेम पत्र जेब में ही पड़ा रहने दिया। उसे ज्योति को भेजने का साहस ही नहीं पड़ा।

किन्तु प्रारब्ध ने पुनः अपना प्रभाव दिखाया। दो तीन दिन के लिये उस के पिता को दफ्तर के किसी आवश्यक कार्य्य के कारण, कलकत्ता से कहीं बाहर जाना पड़ा, हेमन्त को गाओं आने का अच्छा अवसर प्राप्त हो गया। वह गाओं को जाते समय अपनी माता से कह गया कि एक मित्र के अनुरोध से विवश होकर वह किसी उत्सव में सम्मिलत होने के लिये बाहर जा रहा है। दो एक दिन में लौट आयेगा।

गाओं पहुंचकर वह सीधा मधुसूदन भट्टाचार्य्य के घर पहुचा। हेमन्त ने झिझकते हुये पुकारा——————"ज्योति !"

भट्टाचार्य्य की पत्नि ने द्वार पर आकर कहा—— —— "पुत्र हेमन्त !"

————हां चाची! घर में कुशलक्षेम तो है।"

एक ही गाओं का निवासी होने तथा पड़ोसी होने के कारण, हेमन्त भट्टाचार्य्य को चाचा और उनकी धर्मपत्नि को चाची कहकर पुकारा करता था।

————"हां पुत्र! सब कुशल पूर्वक है।"

————"ज्योति के लिये अच्छी अच्छी पुस्तकें लाया हूं। वह इन दिनो पढ़ने लिखने में ध्यान भी देती है या नहीं ?"

————"इतना समय कहां ? किन्तु फिर भी कुछ न कुछ पढ़ ही लेती है।"

————"ज्योति इस समय कहां है" ?

"————सामने चैटर जी महाशय के घर गई है। उन की पुत्री निरुपमा कल सुसराल से आई है इसलिये उस से

मिलने चली गई है। तुम आज तो यहीं रहोगे?"

———"हां कल तक भी यहीं रहूंगा ?"

———"तुम तो अकेले ही आये हो। एक वार अपनी माता को भी साथ लेते आओ न ?"

———"माता का तो वहां से हिलना असम्भव है।"

उस समय भट्टाचार्य्य की पत्नि ने अपने हार्दिक भावो को प्रकट करना आरम्भ किया। वह कहने लगीं———पुत्र ! तुम कलकत्ता में रहते हो ? अब ज्योति स्यानी हो गई है। उसके लिये कलकत्ता में कोई उच्च कुल का सुशिक्षित वर खोज करते तो अच्छा था। तुझे यह भी भली प्रकार ज्ञान होगा कि हमारी आर्थिक दशा कुछ अच्छी नहीं है। ———क्या तुम्हारी दृष्टि में ऐसा कोई लड़का नहीं जो, ज्योति को देख सुनकर हमें इस भार से हलका करे ?"

हेमन्त की छाती धड़कने लगी। भट्टाचर्य्य की पत्नि के इन शब्दो ने कि तुम ज्योति के लिये किसी अच्छे वर की खोज करो, हेमन्त के हृदय पर गहरा प्रभाव उत्पन्न किया। भला क्या कोई अपने हाथ से विष का प्याला उठाकर प्रसन्नता पूर्वक पी सकता है। क्यो ? चाची जी———ने कहा कि तुम इस भार से हलका करो। हेमन्त के ज़ख़मी हृदय पर एक और चरका लगा। वह मन ही मन में इन बातो पर विचार करने लगा। थोड़ी देर तक उस के मुख से कोई वात न निकली। अन्त में उसने अपने आप को सम्भाला। अधिक देर तक चुप रहना उसने उचित न समझा। कहीं चाची जी के मन में मेरे इस प्रकार चुप रहने से कुछ ...ा न उत्पन्न हो जाय, वह प्रत्यक्ष रूप में बोला———

"बहुत अच्छा। मैं ज्योति के लिये किसी उच्च कुल के सुशिक्षित लड़के की अवश्य खोज करूंगा। किन्तु अच्छे लड़के इन दिनो कहां मिलते हैं? ज्योति को किसी ऐसे वैसे लड़के के गले मढ़ देना भी तो ठीक नहीं।"

हेमन्त के मुख से उपरोक्त बात सुनकर भट्टाचार्य्य की पत्नि बहुत प्रसन्न हुई और कहने लगी—"पुत्र! आज हमारे यहां भोजन करना?"

हेमन्त मन ही मन में सोचने लगा———ओहो ज्योति सन्मूख बैठी रहेगी। बहुत समीप! प्रत्यक्ष रूप में बोला! बहुत अच्छा! थोड़ी देर के लिये मैं घर हो आऊं।

वह घर गया। घर में कोई आवश्यक कार्य्य न था। घर आकर उसने उसी प्रेम पत्र का अध्ययन करना आरम्भ किया, जो उसने ज्योति को लिखा था। बार बार खोलने और लपेट कर रखने से उसकी बुरी दशा हो गई थी। कहीं कहीं स्थानों पर तो वह फट भी गया था।

एक-दो-तीन बार उसने उस प्रेम पत्र का अध्ययन किया। यह पत्र आज वह ज्योति को पढ़ने के लिये देगा। उस पर यह पत्र प्रकट कर देगा, कि ज्योति के लिये उस का मन कैसा चंचल रहता है।———उसके हृदय पर उसने कितने ही गहरे घाव लगाये हैं। ज्योति के बिना हेमन्त का जीवन कैसा अन्धकारमय है? और कितना व्यर्थ? उस के पश्चात् उसने सोचा।———जाने दो? बाबु जी से इस प्रकार भय खाने से क्या प्राप्त? इतना भय भी किस काम का?———बहुत होगा तो वह घर से निकाल

देंगे——————वह एक पैसा भी नहीं देंगे ?——————न दें ? क्या वह इस योग्य भी नहीं, कि कहीं दूर देश में जाकर अध्यापक बन कर चार पैसे कमा ले ? वह अपने इस अथाह हृदय में इस हार्दिक प्रेम की आशा लेकर उन सब न्यूनताओं को पूर्ण कर देगा। क्या उसमें उसे सफलता प्राप्त न होगी। आज उसने अपने हृदय में इस बात का दृढ संकल्प कर लिया, कि आज वह भट्टाचार्य्य महाशय के पैरों पर गिर कर ज्योति को सदैव के लिये, उन से मांग लेगा। क्या यह भीख उसे नहीं मिलेगी। परन्तु सबसे पहिले ज्योति के हार्दिक भावों का पता लगाना आवश्यक है।

——————क्या वह भी उस को उसी प्रकार प्रेम की दृष्टि से देखती है ? "ज्योति"। "ज्योति"।। "हृदय यह कहता है कि तुम मेरी हो। हां तुम मेरी हो!!"

———

(६)

हेमन्त जब अपनी प्रतिज्ञा अनुसार मधुसूदन भट्टाचार्य्य के यहां भोजन करने आया, तो उसने देखा ज्योति के ज्योतिर्मय सौन्दर्य की किरणो से सब कमरा जग मगा रहा था।

ज्योति ने कहा———"मैं तुम्हें बुलाने जा रही थी।"

हेमन्त ने ज्योति की ओर झूमती हुई दृष्टि से देखा। इन दो-तीन मासों में उस के मुख मंडल पर निखार आगया था। ———सौन्दर्य मानों फूट निकला था———वह राज रानी प्रतीत होती थी। उस के बैठने के लिये कोई राज सिंहासन चाहिये।

हेमन्त के मुख से कोई वात न निकली। वह मन ही मन में कहने लगा———"क्या अच्छा होता, यदि मैं अभी

यहां न आता————ज्योति मुझे घर बुलाने जाती ————वहां एकान्त में उस से————नादान हेमन्त ! यह तूने क्या किया। सब बना बनाया खेल बिगाड़ डाला। ————धिक्कार है तुझ पर।

जब हेमन्त भोजन करने बैठा, ज्योति उसे पंखा करने लगी। उस समय उसे ऐसा प्रतीत होता था, जैसे हेमन्त उस का पति है और ज्योति उस की पत्नि।

जिस के भविष्य के जीवन का इस प्रकार आरम्भ हो। उस मनुष्य के सौभाग्य का क्या ठिकाना ?

ज्योति ने नीरवता भंग करते हुये कहा————"तुम तो हम को भूल ही गये।"

हेमन्त मन ही मन में कहने लगा, ज्योति के बात चीत के ढंग में आज संकोच और लज्जा का नाम तक नहीं। वह प्रत्यक्ष रूप में कहने लगा————"वाह मैं आप लोगों को कैसे भूल जाता ?————तुम्हारे पढ़ने लिखने का क्या रंग है ?"

————"कैसा पढ़ना लिखना ?"

ज्योति को अब बात चीत करने का ढंग आगया था। उस की प्यारी प्यारी हृदय आकर्षक बातों में उस की मधुर और कोमल बानी————मुसकान और बात चीत करने का ढंग, सब ने मिलकर सोने पर सोहागे का काम किया था।

हेमन्त ने कहा————"अच्छा ! आज तुम्हारी परीक्षा होगी। यदि तुम परीक्षा में सफल हो गई, तो इनाम मिलेगा। तुम्हारे लिये मैं अनगिणत पुस्तकें लाया हूं।

———"पुस्तकें कहां हैं देखूं ?"

———"वह मैं घर पर छोड़ आया हूँ।"

———"मैं जाकर उठालाऊँ।"

———"नहीं यह न होगा ? पहिले परीक्षा लूंगा फिर दूंगा।"

———"वाह जाओ जी ! मै न लूंगी। कदाचित् नलूंगी।"

———"क्यो ज्योति ?"

———"तुम ने मुझे यह पुस्तकें अब तक क्यों—न दिखाईं।"

———"मैं जब आया था तो तुम घर पर क्यो न थीं।"

———"वाह मुझे क्या मालूम था कि तुम आज आओगे।—— ——मैं निरुपमा के घर गई थी। वह सुसराल से पहिले पहिल आई हैं। इसके अतिरिक्त जब माता ने जाकर कहा कि तुम आये हो, तो मैं उसी समय वहां से चली आई। यह भोजन किसने बनाया है ? मैं ने ही तो बनाया है ? मैं ने माता से कहा आज मै रसोई बनाऊंगी ? माता ने कहा—"बना ! अपने हेमुं दादा के लिये तू ही बना ?"

"हेमुं दादा"! यह शब्द हेमन्त के हृदय पर तीर की भान्ति लगे ? ज्योति उस समय मुसकरा रही थी।

हेमन्त—(भोजन करके) "मै अब घर जाता हूँ"।

ज्योति—"चलो मैं भी अपनी पुस्तके ले आऊं।"

भट्टाचार्य्य की पत्नि—"पहिले भोजन करले, फिर पुस्तकें ले आना। तेरा हेमु दादा कहीं भागा तो नहीं जाता ?"

हेमन्त मन ही मन में कहने लगा, यह बहुत अच्छा होगा। थोड़ी देर के पश्चात् ज्योति को अकेला पाकर उसे अपने हार्दिक भावों से परिचित कर सकूंगा। यदि ज्योति को कुछ आपत्ति न हुई, तो वह भट्टाचार्य्य महाशय और उन की धर्म-पत्नि के पैरों पर गिर कर ज्योति को उनसे मांग लेगा। पिता की असन्तुष्टता की वह तनिक भर भी परवाह नहीं करेगा ?

हेमन्त घर आकर चारपाई पर लेट गया और ज्योति की प्रतीक्षा में तड़पने लगा। और मन ही मन में कहने लगा। न मालूम ज्योति कब आयेगी। क्या अभी तक उसने भोजन नहीं किया ? भोजन करने में उसने अधिक देर लगा दी है। न जानें क्या कारण ? थोड़ी देर के पश्चात् उसने उन पुस्तकों को, जो वह ज्योति के लिये लाया था, उलट पलट कर देखना आरम्भ किया। और पैंसिल लेकर उसने इधर उधर प्रत्येक पुस्तक पर ज्योति का नाम लिख दिया। उसके पश्चात् उसने उन पुस्तको को बलात्कार सीने से लगा लिया।—— प्रेम के आवेश में उसकी आंखें बन्द होती जा रही थीं। पुस्तको को छाती से लगाने में ऐसा सन्तोष ! ऐसा आनन्द !! इतनी शान्ति !!!

अकस्मात् बाहर से किसी ने पुकारा———"हेमुं दादा ?"

यह आवाज़ सुनकर हेमन्त बिछौने से उछल पड़ा। ज्योति आई है। उसकी छाती धड़कने लगी। कलेजा दहल

उठा——————भय से कांपते हुये स्वर से बोला————
"आओ ज्योति ! आओ ?"

ज्योति घर के अन्दर आई। आकर कहने लगी————
"मेरी पुस्तकें कहां हैं।————दो"।

पुस्तकें बिस्तर पर बिखरी पड़ी थीं। सुनहरी जिल्द बढ़िया कागज़। सुन्दर छपाई। ज्योति पुस्तकों के पृष्ठ उलटने लगी। और हेमन्त अधखिली दृष्टि से उसकी ओर देखने लगा। वह चान्द सा मुखड़ा।————काले घुंघराले बाल।————बालों के गुच्छे चकोर की भान्ति सुन्दर मस्तक। वायु के झोंकों से नाच नाच कर तमाशा कर रहे थे। सेव की भान्ति गुलाबी गाल सुडोल किन्तु सुकुमार हाथ————यौवन फटा पड़ता था। मानो ज्योति एक सौन्दर्य की देवी थी। हेमन्त के रक्त की एक एक बून्द ताल दे देकर नाच उठी। उसने तीव्र स्वर से कहा————
"ज्योति"।

————"क्यों हेमु दादा।"

ज्योति फिर कह रही है———— "हेमु दादा ?"

हेमन्त कुछ देर तक तो चुप साधे रहा। उस के पश्चात उसने ज्योति का हाथ अपने हाथ में दबाया। ज्योति ने हाथ छुड़ा लिया। वह हेमन्त की ओर दृष्टि भर कर भी न देख सकी। स्त्रियों के स्वभाविक भूषण लज्जा ने उसे तत्काल पानी पानी कर दिया। वह झिझक गई। कुछ सहम भी गई

हेमन्त ने कहा——— "क्यों ज्योति । तुम मुझे भूल ही गईं । किन्तु मैं तुम्हें एक पल के लिये भी नहीं भूला । वहां मैं प्रत्येक पल तुम्हारी स्मृति में निमग्न रहता था। ————यह देखो ज्योति । मैं ने तुम्हें एक पत्र भी लिखा था । किन्तु कहीं तुम असन्तुष्ट न होजाओ, इसी लिये ————केवल इसी लिये तुम्हें न भेज सका———— रात दिन मैं उसे अपनी धड़कती हुई छाती से लगाये रखता था ।"

उपरोक्त बातें कहकर हेमन्त ने अपने हृदय का भार हलका करने का प्रयत्न किया । उसने अपने हार्दिक भावों और लालसाओं का वर्णन ऐसे प्रभाव शाली शब्दो में और ऐसे ढग से किया कि कोई योग्य से योग्य उपन्यास लेखक भी इस से अधिक आनन्द पुर्ण ढंग और हृदय आकर्षक शब्दो में सन्मुख न रख सकता । उसने वह प्रेम पत्र खोल कर ज्योति के हाथ में देदिया । ज्योति के रोंगटे खड़े हो गये दृष्टि के सन्मुख काले अक्षर धुन्धले दिखाई देने लगे। कालिमा मानो हाथो पर दौड़ने लगी ।

हेमन्त ने कहा————"इसे पढ़ो ।"

ज्योति चुप और अचेत खड़ी रही ।

हेमन्त ने कहा————"अच्छा लाओ—मुझे दो—मैं स्वयं पढ़ूं । सुनोगी तो ?"

ज्योति ने "हां————नहीं————"कुछ उत्तर न दिया । गरदन झुकाकर हां कुछ कहती । इस बात का भी उसे

साहस न हुआ। वह इस प्रकार अचेत खड़ी रही जैसे किसी का समस्त शरीर बिजली के यंत्र से छू जाने के कारण पत्थर हो गया हो।

हेमन्त खुशी खुशी पत्र पढ़ने लगा। और ज्योति लकड़ी के सदृश जड़ बनी हुई खड़ी रही। उसे उस समय ऐसा प्रतीत होता था, जैसे कोई उस के कानों के समीप हथोड़े से चोटें लगा रहा हो। प्रेमकी यह चोटें रह रह कर उसके हृदय के पर्दों से टकराती थीं। सिर में चक्कर आने लगे।

पत्र समाप्त कर और एक ठन्डी सांस लेकर हेमन्त ने कहा——————"ज्योति ! क्या मेरी आशायें, हार्दिक कामनायें अकारथ जायेंगी।"

ज्योति चुप————वह विस्मय की मूर्ति बनी ज्यों की त्यों खड़ी रही। मुखसे एक बात भी न निकली। कहने सुनने की शक्ति भी लुप्त हो चुकी थी। वह इस प्रकार खड़ी थी जैसे किसी ने उसे पिंजरे में बन्द कर दिया हो।————सांस बन्द होता जा रह था। समस्त शरीर रह रह कर कांप उठता था।

हेमन्त ने कहा—"ज्योति ! अपने प्यारे ओंठों से एक बार तो यह कह दो कि तुम मुझ से प्रेम करती हो। मुझे प्रेम की दृष्टि से देखती हो।——————एक बार————केवल एक ही बार————फिर मैं तुम्हें तुम्हारे माता—पिता से भिखारी की भान्ति सिर झुकाकर मांग लूंगा। मैं केवल

तुम्हें चाहता हूं। रुपया नहीं चाहता। और कुछ नहीं चाहता। मैं इस संसार असार में केवल तुम्हारा ही अभिलाषी हूं।"

ज्योति मन ही मन में सोचने लगी। यह क्या ? हेमुं दादा को आज क्या हो गया है ? क्या वह कहीं पागल तो नहीं हो गया।————वह एक दिन—फुलवाड़ी वाली बात उसे स्मरण हो आई। किन्तु आज फिर उसी प्रकार——— ज्योति के समस्त शरीर में झरझरी आगई।

हेमन्त फिर कहने लगा————"ज्योति। क्या तुम जिह्वा से एक अक्षर भी न निकालोगी ? "हां या नहीं।" दो अक्षरों में से एक अक्षर तो निकालो ? मैं केवल यही एक बात तुम्हारे मुख से सुनने के लिये यहां आया हूं।"

ज्योति अकस्मात् उठ खड़ी हुई। बोली————हेमुं दादा मैं घर जाऊं ?"

हेमन्त ने कहा—"ज्योति । तुम कोई उत्तर क्यों नहीं देतीं ? कहो।"

इस समय हेमन्त का स्वर अत्यन्त धीमा पड़ गया था।

————"क्या कहूं।"

—————"केवल एक बात————तुम मुझ से प्रेम करती हो ? अथवा नहीं———बताओ ज्योति। बताओ।"

ज्योति आज यह भली प्रकार समझ गई कि हेमन्त उस से आज क्या उत्तर लेना चाहता है । इस प्रश्न पर उस दिन संध्या के अतिरिक्त उसने कभी विचार नहीं किया था।

————आज हेमन्त का यह बर्ताव————यह कंपित स्वर————यह चंचलता। उस के लिये लज्जा की बात थी हेमन्त का वियोग उस के लिये कष्ट दायक था। किन्तु क्यों। ————क्यों वह इस कष्ट में ग्रस्त है ? आनन्द की खोज किसको नहीं होती ? दुखो में जान बूझ कर कोई नहीं फंसता ? किन्तु इन बातों में आनन्द कहां ? इसके अतिरिक्त इन बातों के सिवा उसने किसी दिन भी कुछ न सोचा। किन्तु हेमन्त की आज की बातें————बिल्कुल असह्य थीं।

ज्योती की दशा उस समय शोचनीय थी। ऐसा प्रतीत होता था कि उस का प्रत्येक अंग किसी आंधी के झोंकों में ठोकरें खा रहा है। हेमन्त की यह सब बाते कैसी थीं ? उस दिन संध्या के समय हेमन्त के जाने के पश्चात ही उस का हृदय रह रह कर "हूँ ! हूँ" करने लगता था। इसे कुच्छ अच्छा नहीं लगता था। जब वह हेमन्त की इन बातों पर विचार करती, तो उस समय अनेक प्रकार के रहस्यमय विचारो की उलझन में फंस जाती थी। अन्त में उसने थोड़े प्रयत्न से अपने चंचल मनको बश में कर लिया———— कि दो दिन का, अतिथि हेमन्त उसके मार्ग में आ खड़ा हुआ था। किन्तु अब वह चला गया है। अब चिन्ता करने की क्या आवश्यकता है ?

यह संसार सराये फानी है। इसमें कोई आता है और कोई यहां से चला जाता है। सब दो दिन के अतिथि हैं।

इस लिये इन दो दिनों के अतिथियों के लिये कौन घर के किसी कोने में बैठ कर आँसु बहाये। वह लौट कर वापस नहीं आसकते। ज्योति यह बात भली प्रकार जानती थी। हेमन्त उसका कौन था? वह एक अतिथि था। दो दिन के लिये उसे मिलने आया था। फिर अपने देश को चला जायेगा। उसके लिए वह अब क्यों आंसु बहाये। इस से कुच्छ लाभ? इनही बातों ने उसे रोने से वञ्चित कर रक्खा था और वह हेमन्त के वियोग का दुःख भूल गई थी। किन्तु आज हेमन्त के पत्र के इन शब्दो ने "ज्योति! क्या तुम मुझसे प्रेम करती हो"? इस शान्त अग्नि को पुनःप्रज्वलित कर दिया। उस के हृदय में हेमन्त का प्रेम फिर उत्पन्न हो गया।

विवाह की बात———इसबात से वह भली प्रकार परिचित थी कि हिन्दू कन्या स्वयं अपनी जिह्वा से विवाह की चर्चा नहीं कर सकती। और न वह इस बातको छेड़ सकती है। ऐसा करना हिन्दू कन्या के लिये उचित भी नहीं। यही कारण था कि वह अपने आप को इन बातो से दूर रखने की चेष्टा कर रही थी।

हेमन्त की उपरोक्त बातें सुन कर ज्योति मन ही मन में सोचने लगी। हेमन्त ने यह सब बातें मुझ से क्यों कही हैं। उसे इन बातों के कहने से क्या लाभ था? क्या हेमन्त की इन बातों का उस के हृदय पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा? नहीं! यह बात नहीं थी। किन्तु इस से लाभ? उसने अपने मन को डगमगाने न दिया। कोई बात कहे बिना वह द्वार की ओर

चली। हेमन्त सिंह की भान्ति घूर रहा था। उसने लपक कर ज्योति को पकड़ लिया। और उसे अपनी छाती से लगा कर प्रेम के आवेश से उस की गालो को लाल करदिया।

ज्योति रुदन करती हुई भुमि पर गिर पड़ी।

उस समय हेमन्त चौंक उठा। वह यह क्या कर रहा है ? इतनी देर तक न जाने वह किस विचार में निमग्न था। बोला ——————"ज्योति ! मुझे क्षमा करो ? मैं पत्थर हूँ। मुझे क्षमा करो"——————यह कहते कहते उस ने ज्योति के पैर पकड़ लिये।

ज्योति ने कहा—"छोड़ो हेमुं दादा ?

हेमन्त ज्योति के पैर छोड़कर—उन्मत्त की भान्ति भुमि परबैठ गया। उस समय उस की दृष्टि के सन्मुख अंधकार का पर्दा आगया था। उसे सब संसार अन्धकार मय दृष्टि गोचर होने लगा।

जब वह पर्दा दूर हुआ, उस समय ज्योति चली गई थी।

हेमन्त उठ खड़ा हुआ—बिछौने पर दृष्टि डाली। पुस्तकें सब की सब वहीं पड़ी हुई थीं। ज्योति एक भी न लेगई। यह क्या हुआ ? हेमन्त बिछौने पर पडी हुई पुस्तको पर लेट कर बालकों की भान्ति बिलक बिलक कर रोने लगा।

उस दिन जब संध्या का अन्धकार गाओं के चारों ओर फैल गया। उस समय उस अन्धकार में मुख छुपा कर चोरों की तरह चुपचाप उस ने भी घर को छोड़कर कलकत्ता की राह ली। गाओं से विदा होते समय उसने ज्योति के घर की

ओर देख कर एक गहरी सांस ली। वह सांस सब की दृष्टि से बचकर वायु मंडल में मिल गई। यह कोई भी न समझ सका कि इस सांस के साथ हेमन्त के टूटे हुये हृदय ने कितने दुःख के साथ अपने दर्द भरे विचार बाहर निकाले थे।

———

ज्योति हेमन्त के गाओं से चले जाने के पश्चात अपने घर न पहुंची। वह सीधी नारायण घोशाल के घर गई। नारायण घोशाल का घर यद्यपि टूटा फूटा और मरम्मत के योग्य था। लेकिन फिर भी बहुत लम्बा चौड़ा और खुला मकान था। उस घर में केवल दो मनुष्य रहते थे।
————नरायाण घोशाल की दो विधवा स्त्रियां—दोनों वृद्ध थीं। उन्हें किसी के सन्मुखय खड़ा होने अथवा हाथ पिसारने की आवश्यकता न पड़ती थी। और उन के लिये यह सब से बड़ी गर्व की बात थी।

उस समय ज्योति के हृदय में आग लगी हुई थी, गालों और ओंटों से जहां हेमन्त ने अपने प्यार तथा प्रेम के कितने ही चिन्ह अंकित कर दिये थे, चिंगाड़ियां उड़ रही थीं।

ज्योत को विवश होकर उस वृक्ष का फल चखना पड़ा। जिस के समीप जाने की भी उसे आसा न थी। उस समय उसे ऐसा प्रतीत होने लगा। जैसे किसी ने उस के शरीर पर खौलता हुआ सीसा डाल दिया हो। ज्योति यह अनुभव कर रही थी कि उस के दोनों ओंट अन्दर ही अन्दर जल रहे हैं। इन में सख्त दर्द हो रहा है।

तीसरी मंज़िल की छत पर कारनस के समीप ही कई कबूतर बैठे हुये थे।—ज्योति को देखकर वह आकाश में उड़ गये। थके मान्दे पथिक के सदृश ज्योति भी वहीं बैठ गई। गाओं के कितने ही मिले जुले स्वर कोतुहल की भान्ति उस के कानों में आरहे थे। ज्योति भी वहां बैठी बैठी इन स्वरों को सुनने की चेष्टा कर रही थी।

हेमन्त ने आज उस के साथ बड़ा विश्वास घात किया। उस के इस असभ्यता के बर्ताव और अनुचित कार्य्य से उस की सारी लालसासें मिट्टी में मिल गईं। उस फुलवाड़ी में हेमन्त का उस से लिपट कर प्यार करना भी उसे स्मरण हो आया। उस दिन उस ने हेमन्त के इस बर्ताव से यह परिणाम निकाला था कि बड़े भाई ने अपनी छोटी बहन से प्यार किया है। इस कार्य्य में कोई अपवित्र प्रेम की सुगन्धि छुपी हुई है, यह बात भूल कर भी उस के हृदय में न आई थी। किन्तु आज————यह सब बातें—प्रेम पत्र—यह कांपता हुआ दर्द भरा स्वर—जब यह सब बातें उसे एक एक करके याद आने लगीं। तो उस के हृदय में हेमन्त और उस के इस

अनुचित कार्य्य से घृणा उत्पन्न होने लगती थी। और क्रोध से आंखें लाल हो जाती थीं

छी! छी!! क्या हेमन्त उसे इस लिये पढ़ना लिखना सिखाने के लिये आता था? उसे इस लिये पुस्तकें लाकर देता था। उसे फुसला कर———लालच देकर वह उसे नष्टता की गार में गिराना चाहता था। और वह उसे इतना प्रेम क्यो करने लगी थी। ज्योति रोने लगी। जब वह माता के सन्मुख जाकर खड़ी होगी। तो माता क्या कहेगी?———चलते समय माता ने कहा था——— "उसके घर में कौन है? तू उसके घरमें इतने बड़े लड़के के पास अकेली जायेगी? तू अब युवावस्था में पहुच चुकी है। यदि लोगों ने तुझे उसके पास जाते देख लिया, तो क्या कहेंगे?" उस समय माता की बात पर मैंने बुरा मनाया था। अब उसी माता के सन्मुख वह कौन सा मुख लेजाकर खड़ी होगी। हेमन्त ने आज उसका सख्त अनादर किया है।

ज्योति की आंखो में आंसू भर आये। उसने थरथराते हुए स्वर में कहा?———माता! वह मेरा कौन था?———हां यह तो ठीक है हेमन्त———अपने गाओं का लड़का———तेरा कोई नहीं———तो क्या?

ज्योति चुप चाप बैठी रही।

माता मन ही मन में कहने लगी, यह बेल मंडे चढ़ती दिखाई नहीं देती। माता पिता का इकलौता पुत्र है और यही उनकी दौलत है। दहेज़ लिये बिना वह क्यों विवाह करने लगे। हेमन्त बहुत अच्छा लड़का था।

जैसा वह सुन्दर और भलामानस है। वैसा ही पढ़ने लिखने में भी चतुर है। आह! वह कितना सरल स्वभाव है?

ज्योति का हृदय अन्दर ही अन्दर चोट खाई हुई नागिन की भान्ति फुंकारे मार रहा था। हेमन्त सरल स्वभाव का लड़का है। कौन कहता है?———माता को क्या मालूम कि उसके सीधेपन का कितना मूल्य उसे देना पड़ा है। वरञ्च———किन्तु कोई आशा नहीं———यह बात————इतने अत्यन्त दुःख की बात! जिह्वा से कहने का भी साहस नहीं पड़ता था। यह बात?——— ज्योति का चेहरा गलानि के मारे लाल हो गया?————आज कुछ न खाऊंगी? मेरा मन दुखी है, यह बहाना करके ज्योति अपने कमरे के अन्दर चली गई। और दीपक जला कर रामायण का पाठ करने लगी।

——इतने में माता ने आ कर कहा—"रामायण पढ़ रही है?———पढ़————मैं भी सुनुंगी। वह बाहर गये हैं। आज रात्री को घर नहीं आयेंगे।"

———
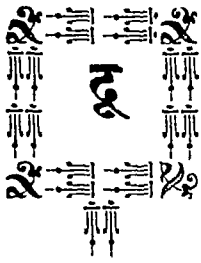
दूसरे दिन प्रातः काल होते ही ज्योति के हृदय से वह सब तित्तर बित्तर खयाल (जो कल हेमन्त के उस अनुचित बर्ताव से जो उसने ज्योति के साथ किया था) जो ज्योति के हृदय में उत्पन्न हो गये थे, गलत अक्षर की भान्ति मिट गये थे। ज्योति आज वह ज्योति न थी। उसके मुख-मण्डल से यह प्रत्यक्षरूप से प्रतीत हो रहा था कि आज उसे नवीन जीवन प्राप्त हुआ है। उसके हृदय के सब काले दाग सूर्य देवता की सुनहरी किरणों ने धो धो कर साफ कर दिये थे। उसने ठण्डी सांस ली। और फिर स्नान करने के लिये नदी की ओर चल पड़ी। हेमन्त के हाथ लगाने से उसके हृदय में जो अग्नि प्रज्वलित हो गई थी, वह नदी के पानी से बुझ गई। घर वापस आकर उसने भीगे

कपड़ों को इधर उधर बखेर दिया। इसके बाद वह माता से आज्ञा लेकर निरुपमा के घर चली गई।

निरुपमा ने ज्योति को सम्बोधित करते हुए कहा—"ज्योति बता! कल तुझे हेमन्त ने क्या कहा था ?"

ज्योति निरुपमा के इन शब्दों का कुच्छ उत्तर न देसकी। वह चुपचाप बैठी रही। उस समय उसका समस्त शरीर थर थर कांप रहा था। और ऐसा प्रतीत होता था कि निरुपमा के इन शब्दों ने उस के हृदय पर गहरा प्रभाव डाला है।

निरुपमा ने उत्तर की प्रतीक्षा न करते हुये पुनः कहा ————" काश मेरा विवाह हेमन्त के साथ होजाता!" निरुपमा के यह शब्द ज्योति सहन न कर सकी। उसके ज़खमी हृदय पर इन शब्दों से एक और चरका लगा। उस के हृदय के जिस कोने में पीड़ा हो रही थी। उस स्थान पर निरुपमा की यह बात बलात्कार फैंके हुये तीर के समान लगी। दोनों आंखों से टप टप आंसुओं की बून्दें गिरने लगीं।

ज्योति की यह दशा देखकर निरुपमा चैन से न बैठ सकी। उसने ज्योति को छाती से लगाकर कहा—" क्यों ज्योति! रो क्यों रही हो ? इतनी बात से असन्तुष्ट होगई। मैं जब सुसराल से आई, तो मैं ने लोगों के मुख से सुना कि हेमन्त अब नित्य प्रति गाओं में आता है और ज्योति को नित्य नई पुस्तकें लाकर देता है"।

ज्योति का रक्त पसीना होगया। इस से पहिले कभी उस की ऐसी दशा न हुई थी। वह हेमन्त से इतने दिनों तक

बेखटके मिलती जुलती रही थी। इस विषय में जिन बातों के गुप्त रखने की आवश्यकता होती है उन पर उसने कभी विचार नहीं किया था। कल की घटना के पश्चात और पड़ोस में इतनी हल चल देख सुन कर, उसका हृदय लज्जा और भय से भर गया। और वह मन ही मन में कहने लगी —अब मैं गाओं के लोगों को अपना मुख किस प्रकार दिखाऊंगी।

निरुपमा ने कहा————" ज्योति भला यह तो बता कि हेमन्त ने तुमसे विवाह के विषय में भी कुछ कहा था ? अथवा नहीं "।

ज्योति निरुपमा की इस बात का क्या उत्तर देती ? वह चुप बैठी रही—कल की—घटना की सब बातें प्रज्वलित अग्नि की भड़कती हुई चिंगाड़ियो की भान्ति पुनः उसके हृदय में उत्पन्न हो गई।

निरुपमा ने बातो का सिलसिला न तोड़ा। वह पुनः कहने लगी—" क्या तू उसके साथ विवाह करना चाहती है? ज्योति बताती क्यों नहीं ? क्या तू उससे प्रेम करती है " ?

ज्योति ने सिर हिलाकर कहा—"नहीं—कदापि नहीं।"

ज्योति की इस निर्भयता, लापरवाही और उत्साह को देखकर निरुपमा भी चुप होगई। ज्योति को अब वहां पल भर भी ठहरना कठिन होगया। वह किसी एकान्त स्थान में बैठ कर रुदन करने की इच्छुक थी। यदि वह किसी प्रकार वहां से भाग जाये, तो उसकी जान में जान आजाये। किन्तु एकाकिनी वहां से क्यों कर भागे ? वह इसी चिन्ता में कमरे

के एक कोने में बैठ गई। निरुपमा किसी आवश्यक कार्य्य के कारण उसे यह कहकर " कि मैं आती हुँ, अभी मत जाना, अभी तुम से बहुत सी बातें करनी हैं।" कमरे से बाहर हो गई।

ज्योति को अब यहां से भागने का अच्छा अवसर मिल गया।

निरूपमा के चले जाने के पश्चात, ज्योति ने एक बार आकाश पर दृष्टि दौड़ाई। उस समय उसे आकाश भी प्रज्वलित अग्नि के सद्रश दृष्टि गोचर हुआ। और उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि कोई दहकती हुई चिंगाड़ी उस की छाती में प्रविष्ट हो कर उसे राख कर रही है। जिसके कारण उसका सांस अन्दर ही अन्दर घुटता जा रहा है। उसने एक बार कमरे की दीवारों को गौर से देखा———द्वार की ओर देखा। जब किसी मनुष्य को वहां खडे न पाया, तो वह धीरे धीरे पग उठाती हुई, चोरों की तरह दबे पाओं निरूपमा के घर से बाहर हो गई। मार्ग में उसने दो पुरुषों को देखा, जो नदी में स्नान करने जारहे थे। इन दोनों में से किसी की ओर न देखकर, वह आंधी की भान्ति अपने घर वापस आगई। उसके पश्चात उसने रुदन करना आरम्भ किया। रोते रोते जब वह बिलकुल थक गई। उस समय दिन बहुत चढ़ आया था। हार्दिक आवेश आंसुओं के सागर में डूब कर बहुत कुछ कम हो गया था। उसने मन ही मन में विचार किया———"क्या उसने वास्तव में हेमन्त को प्यार किया

है————उस प्रकार का प्रेम————जिस प्रकार उपन्यास के प्रेमी और प्रेमिका दोनों परस्पर एक दूसरे को करते हैं।————एक के वियोग में दूसरे को जिस प्रकार विरह की अग्नि में जलना पड़ता है और फिर जब दोनों परस्पर गले मिलते हैं, तो अत्यन्त आनन्द से उनके हृदय की मुरझाई हुई कली किस प्रकार खिलकर फूल बन जाती है। क्या इन दोनों में कभी इस प्रकार की बात हुई थी। या नहीं। और क्या कभी होगी भी।"

————गुज़री हुई घटनाओ की सब टूटी हुई कड़ियां जोड़ जोड़ कर वह इसी प्रश्न का उत्तर खोजने लगी। किन्तु इस मै उसको सफलता प्राप्त न हुई।

उस बार जब हेमन्त कलकत्ता चला गया था। उस संध्या के अन्धकार में उसकी वह दृष्टि जब ज्योति के घर पर बार बार पड़ती थी————उस समय ज्योति ने कुछ दूरी पर छुप कर उसी अन्धकार के पर्दे में वह दर्द भरा दृश्य देखा था————या उस दृश्य को देखकर हार्दिक आनन्द से या किसी और विचार से उसका नन्हा सा हृदय बल्लियों उछलने लगा था। उसका कारण————दूसरे दिन प्रातः काल उसका बिस्तर छोड़ने को जी नहीं चाहता था। सखियो की बाते, हास-परिहास कुछ अच्छा नहीं लगता था। उसे उस समय ऐसा प्रतीत होता था, जैसे उस के जीवन का प्रकाश बुझ गया है। और उसके भोग

विलास————आमोद प्रमोद की सामिग्री हेमन्त अपने साथ ले गया है। इन बातों पर विचार करती हुई ज्योति सहसा चौंक उठी। और वह कहने लगी।————"क्या इसी का नाम प्रेम तथा स्नेह है? क्या उपन्यास लेखक और कवि सब इसी के इतने उपासक है? छी! छी!!"

ज्योति की दशा कुच्छ और ही होगई। उसने अब मन ही मन में इस बात का दृढ़ संकल्प कर लिया, कि वह भविष्य में कभी भी अकेली बैठ कर बीती हुई घटनाओ पर विचार नहीं किया करेगी। हेमन्त की बात को वह कभी हृदय में भी न लायेगी। उस के खयाल को कभी भी हृदय में स्थान न देगी। और अपने हृदय—गृहका द्वार इस प्रकार बन्द कर देगी, जिस से वह फिर कभी उस में प्रवेश न कर सके। वह कौन है। उस का कोई नहीं। फिर उस का इस प्रकार वर्णन करना क्या अर्थ रखता है? फिर इसे उस के वियोग का इतना दुःख क्यो है? यदि फिर कभी उस का खयाल हृदय में आया, तो वह क्रोध से जल भुन कर अपने हृदय को कुचल देगी। और माता के साथ एक ही घर में रहकर वह घर के छोटे बड़े कामो में लगी रहेगी। और इस प्रकार हेमन्त का खयाल अपने हृदय से दूर कर देगी।

इन्हीं विचारो को सन्मुख रखकर ज्योति चारपाई से उठी। उठकर उसने हेमन्त की दी हुई पुस्तकों को एकत्र करके उनके टुकड़े टुकड़े कर डाले और उन में आग लगा दी। जब तक वह पुस्तकें जलती रहीं, वह निगाह जमाये आग का तमाशा देखती रही। उस के पश्चात जब पुस्तकें जलकर

(१२)

उस के पश्चात ज्योति ने हेमन्त को फिर कभी नहीं देखा ? जब कभी हेमन्त की स्मृति उस के हृदय में आकर चुटकियां लेती, तो वह उस समय घर के धन्धों में व्यस्त रहकर या सखियों के साथ बात चीत करके, उस का खयाल हृदय से भुलाने का घोर प्रयत्न करती थी। प्रायः ऐसा हो जाता था, कि जब कभी घर के धन्धों या सखिओं की बात चीत से उस का मन ऊभ जाता, तो वह थकावट दूर करने के अभिप्राय से एकान्त स्थानों में बैठ कर बीती हुई बातों की समृति से अपना मन बहलाने की चेष्टा करती थी। हेमन्त ने उस के हृदय—गृह में इतना स्थान तो प्राप्त कर ही लिया था कि जब कभी उस का खयाल उस के हृदय में

उत्पन्न होता, तो ज्योति उस का खयाल करते ही बिस्मय में लीन हो जाती थी। जब कभी उसको हेमन्त की याद आती तो वह उस समय हृदय में इस बात पर विचार किया करती थी, कि मैं ने हेमन्त के साथ ऐसा वर्ताव क्यों किया ? एक छोटी सी बात को इतना बड़ा बनाकर वह क्यो इतनी चेष्टा कर रहा है ? उसे क्या होगिया है————उस का क्या बिगड़ गया है————कुच्छ भी नहीं।

इसी दशा में उस के जीवन की नाव नदी में झकोले खाती बहती चली जा रही थी। दोचार स्थानों से उस के विवाह की बात चीत भी चली थी। किन्तु भट्टाचार्य्य महाशय को इन में से कोई भी घर पसन्द नहीं आता था ————लड़के गाओ के थे। कोई किसी दफ़्तर में नौकर था। कोई प्रोहित का लड़का था। और कोई शास्त्री की परीक्षा की तैय्यारियां कर रहा था। भट्टाचार्य्य महाशय इन में से किसी एक के साथ ज्योति का विवाह करने पर राज़ी न हुये। वे प्रायः कहा करते थे कि ज्योति उच्च सुशिक्षित लड़की है—— — देखने में अप्सरा—— ——अब युवा वस्था में पहुंच चुकी है। ऐसी अच्छी समझ बूझ———— ऐसी लड़की के लिये कोई योग्य वर चाहिये।

गाओ के लड़कोमें से कोई भट्टाचार्य्य महाशय को पसन्द न आने का कारण भी यही था।

ज्योति किसी गंवार, घटा हिलाने वाले पडित———— कथा वाचक परोहित————चावल और केले बान्धने या नाचने गाने वाले कथक के साथ विवाह करके चैनसे जीवन

व्यतीत नहीं कर सकेगी। यही एक खयाल था जो भट्टाचार्य्य महाशय को इन लड़कों में से किसी एक के साथ ज्योति का विवाह न करने पर विवश करता था।

भट्टाचार्य्य महाशय की यह हार्दिक कामना थी कि ज्योति का विवाह किसी उच्च सुशिक्षित लड़के से किया जाये, जो समाज के बुरे सिद्धान्तो अथवा कुरीतयों को दूर करने की योग्यता रखता हो। भट्टाचार्य्य महाशय की इन बातो को सुन सुन कर गाओ के दोचार सुशिक्षत बूढ़े बहुत बुरा मनाया करते थे।

जब कभी वह भट्टाचार्य्य महाशय से ज्योति के विवाह के विषय में बात चीत करते थे, तो वह उन को यही उत्तर दिया करते थे कि "मैं बाल विवाह के विरुद्ध हूँ। दोचार वर्ष के पश्चात जब वह युवावस्था में पुहुच जायेगी, उस का विवाह करूंगा ? इस से पहिले नहीं"।

भट्टाचार्य्य महाशय की यह हार्दिक कामना थी कि यदि हेमन्त के साथ ज्योति का विवाह हो जाये तो अच्छा होगा। किन्तु चूंकि सुशील कुमार बाबु का पैसे का लालच दिन प्रतिदिन बढ़ रहा था और वह अपने मन में इस बात का दृढ़ संकल्प किये बैठे थे, कि जो व्यक्ति उन्हें दहेज़ में सब से अधिक रुपये देगा ? वह अपने पुत्र हेमन्त का विवाह उस की कन्या से करेंगे ? सुशीलकुमार बाबु का यह विचार और संकल्प भट्टाचार्य्य महाशय गाओ के एक दो पुरुषों के मुख से सुन चुके थे। इस लिये उन्हें सुशीलकुमार बाबु से

इस विषय में बात चीत करने का साहस न होता था। और वह इधर से बिल्कुल निराश हो चुके थे। किन्तु उन की पत्नि के इस प्रकार चर्चा छेड़ने से उन्हें पुनः हेमन्त का खयाल आया। और उन्हो ने इस विषय में सुशीलकुमार बाबु के विचार अथवा हार्दिक भाव मालूम करने के अभिप्राय से काली देवी के दर्शन करने के बहाने, कलकत्ता जाने का निश्चय किया।

एक दिन जब यह कलकत्ता जाने की तैय्यारियां करने लगे, तो ज्योति ने आकर पूछा———" बाबु जी आज आपका कहां जाने का विचार है ?

———" पुत्री ! मेरी इच्छा काली देवी के दर्शन करने की है। देखूं ! यदि माता कृपा करें तो ———

भट्टाचार्य्य महाशय ने तो ज्योति को यह कहकर टाल दिया, किन्तु ज्योति को माता के मुख से वास्तविक बातें मालूम हो गईं। ज्यो ही उसने माता के मुख से यह बात सुनी कि भट्टाचार्य्य महाशय इस अभिप्राय से कलकत्ता गये है कि सुशीलकुमार बाबू से मिल कर ज्योति के साथ हेमन्त के विवाह के विषय में उन का हार्दिक भाव मालूम करें, तो उस के हृदय में उस समय हेमन्त की कल्पनिक मूर्ति ने आकर उस के हृदय पर चोट पहुंचाई। ज्योति मन ही मन में कहने लगी———"हेमन्त !——— आह ! यदि सौभाग्य से ऐसा हो भी गया, तो गाओ वालों का मुख बन्द करने का अच्छा अवसर हाथ आजायेगा।" इस के अतिरिक्त

वह हेमन्त को प्रेम की दृष्टि से देखती है और हेमन्त उसे हृदय से प्रेम करता है। यदि ईश्वर की कृपा और अनुग्रह से मेरा विवाह हेमन्त के साथ हो गया, तो विचित्र आनन्द प्राप्त होगा ? हम दोनो को इस प्रकार का प्रेमी और प्रेमिका समझा जायेगा जिनका वर्णन प्राय: उपन्यासो में हुआ करता है। और वह विवाह शुभ विवाह होगा। जीवन के शेष दिन आनन्द पूर्वक व्यतीत होगे। ज्योति ने उस दिन सब समय इन ही विचारो में व्यतीत कर दिया।

भट्टाचार्य्य महाशय दूसरे दिन घर लौट आये। उनको घर में आता देखकर ज्योति ज्वर का बहाना करके बिस्तर पर जा लेटी। किन्तु उस के कान उसी ओर लगे हुये थे। भट्टाचार्य्य महाशय की यात्रा कहां तक सफल हुई, वह यह बात जानने के लिये अत्यन्त अधीर हो रही थी। किन्तु उन्हों ने अपने मुख से इस बात की चर्चा तक न की। भट्टाचार्य्य महाशय के थोड़ी देर विश्राम करने के पश्चात उन की पत्नि ने पूछा——————" कहो क्या हुआ ? "

भट्टाचार्य्य महाशय ने कहा——————" राम राम करो। वास्तविक बात तो उन से कहने का अवसर ही नहीं मिला। वहां जाकर देखा कि सुशील बाबु को मरने का भी अवकाश नहीं। दोतीन स्थानों से लड़के के विवाह की चर्चा छिड़ी थी। कलकत्ता के बड़े बड़े धनाढय दस दस बारह बारह हज़ार रुपय दहेज़ में देने को कह रहे थे। परन्तु मेरे सन्मुख ही सुशीलकुमार बाबु ने अभी हेमन्त का विवाह न करने का

बहाना किया और उन्हें उत्तर दिया कि हेमन्त को परीक्षा में सफल हो लेने दो, फिर मैं इस लड़के के पंद्रह हज़ार से कम न लूंगा। यह सब कुच्छ देख सुन कर ज्योति के विवाह की बात चीत छेड़ना मूर्खता नहीं तो और क्या था। इन ही बातों को दृष्टि में रखकर मुझे साहस भी न हुआ कि अपने हार्दिक भावों से उन्हे परिचित करता। जब उन्हों ने मेरे कलकत्ता आने का कारण पूछा तो उत्तर में मैं ने कहा ————"कि मैं यहां काली माता के दर्शन को आया था। मन में आई कि आप के भी दर्शन कर चलूं। इस अभिप्राय से आप की सेवा में उपस्थित हुआ था।

————"तुम्हारी आवभगत तथा सेवा कैसी हुई ?"

————"तो क्या एक रात के लिये वह मुझे दुकान में खाना खाने के लिये भेजते ?"

————"हेमु से भी भेन्ट हुई ?"

————"नहीं, मैं ने उस की हर चन्द खोज की, किन्तु वह मुझे न मिला। पूछने से ज्ञात हुआ कि वह अपने किसी मित्र के यहां पढ़ने गया है।"

————"उस से क्यों नहीं मिले, वह ज्योति से विवाह करने पर राज़ी था।"

————"तुम्हें यह बात कैसे मालूम हुई ?"

————"वह प्राय: ज्योति के लिये पुस्तकें लाया करता था। उसे पढ़ाने लिखाने में घोर परिश्रम करता था।

उस से मैं ने यह परिणाम निकाला, कि वह ज्योति से विवाह करने पर राज़ी है। इस विचार से मैं उसे कुच्छ कहती सुनती न थी। नहीं तो क्या मै कभी ज्योति को उस के साथ मिलने जुलने देती ? गाओं वालो ने न मालूम इस विषय में क्या क्या कहा ? किन्तु मैं ने लोगों की बातो की तनिक भी परवाह न की। सोचा लोगों की बातो पर कान धरना व्यर्थ है। जाने दो यदि इस से लड़की का जी बहलता है तो ——— —"

माता की इन बातों से ज्योति के हृदय में माता से घृणा करने का खयाल उत्पन्न हो गया। वह मन ही मन में इस बात पर विचार करने लगी—"मेरी माता उफ़! वह क्या इसी लिये मुझे हेमन्त से मिलने देती थी। मैं नारी हूँ। क्या इसी लिये मुझे यह अत्याचार सहन करना पड़ेगा ? हेमन्त !—ओह ! क्या अच्छा होता यदि मैं किसी प्रकार उसके गले में फांसी लगा सकती ? ग्लानि तथा लज्जा से उस का सिर भुमि की ओर झुक गया। क्या इसी का नाम विवाह है ?—छी: ! उसको माता पर बहुत क्रोध आया। वह सोचने लगी - "यदि विवाह के बाज़ार में बाहर से लड़का लाकर उसके हाथों में लड़की को सौंप दिया जाय तो उसमें हानि या लाभ जो कुच्छ भी होगा, वह सब पैसे का है————लड़के या लड़की की हार्दिक कामना कोई भी नहीं पूछता ! माता—पिता भी केवल रुपये देखते है। हाय रे

ऐसी बुरी कुरीतियां———ऐसे बुरे रिवाज———
वह पुनः अपनी ही बात सोचने लगी। यह जो हेमन्त———
समझता है कि ज्योति के साथ उस का विवाह असम्भव है———वह पिता से कहेगा कि मुझे रुपये नहीं चाहियें, मुझे तो केवल ज्योति चाहिये———किन्तु जब यह बात स्वयं हेमन्त के वश में न थी, तो किसी को ख़राब करने से क्या लाभ?

सोने चान्दी के आभूषण पहन कर वहु घर आयेगी। एक दिन उसे छाती से लगा कर वहीं हेमन्त न मालूम कितनी प्रेम भरी बातें करेगा? किन्तु एक दिन———
एक दिन ऐसा भी होगा कि इन बातों को प्रेम सागर में डुबो कर वह स्वप्न की भान्ति हृदय से भुला देगा? एक दिन उसने मेरे प्रेम में मुग्ध होकर गाओ की एक निर्धन कुल की कन्या को अपनाने की कितनी चेष्टा की थी? किन्तु जब वह उसके साथ विवाह करने पर राजी न हुई तो वह उसका उपहास करेगा। निर्लज्ज! बुज़दिल!! डरपोक!!!

जब कभी हेमन्त की कल्पनिक मूर्ति उस की आंखों के सन्मुख आ उपस्थित होती थी, या जब कभी हेमन्त की स्मृति उस के हृदय में चुटकियां लेती थी, तो ज्योति के हृदय में यह लालसा उत्पन्न होती थी कि वह इस कल्पनिक मूर्ति को ज़ोर से पकड़ कर हृदय-गृह से बाहर निकाल दे, और उस की अच्छी तरह गत बनाये, किन्तु वह ऐसा करने में असफल रहती थी।

(१३)

जब ज्योति चिन्ता सागर में डूबी हुई थी। जब उसके हृदय पर अनेक प्रकार के भावो ने अधिकार कर लिया था। ठीक उस समय चन्द्रनगर के जिमींदार के यहां से विवाह की बात चीत का आरम्भ हुआ। जब विवाह की सब बातें पक्की हो गईं, तो उस समय ज्योति ने ग्राम निवासियों के सम्मुख सिर ऊँचा किया। और गर्व से कहने लगी—"लोगो देखो! मैं तुम सब से बाज़ी ले गई हूँ।"

विवाह की रसमें समाप्त हो जाने के बाद एक दिन वह सुसराल गई। जब उसे सुसराल में कई मास व्यतीत करने पड़े तो उसने देखा—जिस सौन्दर्य के कारण वह राज रानी

होने आई थी, उसका वहां कोई पूछने वाला भी नहीं।

कुछ ही दिनों के पश्चात वही सौन्दर्य उस के पतन का कारण हो गया।

चन्द्रकान्त चौधरी, जाति-सेवकों, अयोग्य सम्पादकों तथा साधारण उपन्यास लेखको की भान्ति नाम पर मरते थे।

वह अपनी बहु की चर्चा देख और सुन कर अति प्रसन्न होते थे। जैसी बहु उन्हे मिली है, दूर नज़दीक दस-बीस गाओ में खोज करने पर भी ऐसी बहु कहीं नहीं मिलेगी। दहेज लिये बिना उन्होने अपने लड़के का विवाह किया है, वह इस बात को लोगों पर प्रकट करने के लिये सदैव आतुर रहते थे। वह यह बात सब पर प्रकट करना चाहते थे कि उनकी दृष्टि में रुपये की उपेत्ता मनुष्य का अधिक सन्मान है।

न जाने किस भाव को सन्मुख रख कर चन्द्रकान्त चौधरी ने अपने सुपुत्र लक्ष्मी कान्त का विवाह दहेज़ लिये बिना ज्योति से कर दिया। किन्तु प्रत्यक्ष रूप में वह इस विवाह की चर्चा गौरव से किया करते थे। और गर्व से कपड़ों में फूले न समाते थे। वह अपने मन में यह समझा करते थे कि उन्हों ने दहेज़ लिये बिना लड़के का विवाह करके एक बहुत बड़ा कार्य्य किया है।

अपने सुपुत्र लक्ष्मी कान्त का ज्योति से विवाह करने के पश्चात उन्हों ने किसी दिन भूल कर भी यह न देखा कि बहु किस प्रकार रहती सहती है और अपने दिन किस प्रकार

व्यतीत करती है। यह देखना अब उन का कर्त्तव्य न था। वह तो विवाह की रसमें पूर्ण करके बहु को अपने यहां ला कर अपने कर्त्तव्य पालन से मुक्त हो गये थे। अब लक्ष्मी कान्त जाने और उस का काम।

ज्योति ने सुसराल में आकर जो देखा, उस का इस जगह वर्णन करना दिलचस्पी से शून्य न होगा। उसके सुसराल में न उसकी सास थी और न ननद ही। घर का काम काज एक स्त्री किया करती थी जिस का चन्द्र कान्त चौधरी से दूर का सम्बन्ध था और वह क्या क्या और कौन कौन से कार्य्य पूर्ण करेगी। किस किस पर दृष्टि रखेगी यह सब बातें ज्योति को चिन्ता सागर में डाल देती थीं। ज्योति की कोई बात पूछने वाला भी न था। ऐसी कोई स्त्री न थी, जो उस का स्नेह से जूड़ा बान्धे और रात्री को भली प्रकार उस का बनाओ श्रृन्गार करके उसका हाथ पकड़कर उस के पति के कमरे में पहुंचादे। उसे कोई भोजन तक भी नहीं पूछता था। स्वयं ही यदि भोजन करले तो करले, अथवा भोजन के पश्चात पति के कमरे में पहुंच जाये तो पहुंच जाये नहीं तो उसका हाल पूछने वाला कोई न था।

विवाह के पश्चात पहिले कुच्छ दिनों तक दोचार सेव-कायें किसी न किसी प्रकार यह कार्य्य कर दिया करती थीं। किन्तु उस के पश्चात फिर उन्हें इन कार्य्यों के करने की क्या आवश्यकता थी। वह सब अपने अपने कामों में लग गईं।

ज्योति ने कभी तो रसोई घर में रात व्यतीत की और कभी आंगन में————किसी ने यह पूछने की चेष्टा न की कि वह कहां है और रात्री उसने किस प्रकार व्यतीत की है। प्रातः काल ज्योति को सेवकायें जब कभी रसोई घर में सोया हुआ देखती थीं, तो वह उस की हंसी उड़ाने लग जाती थीं। और मुख पर स्पष्ट रूप में कहा करती थीं कि यह गाओ की गंवार और निर्धन कन्या राजकीय ठाठ बाठ को क्या जाने ?

इस समय ज्योति की समझ में यह बात आई, कि यहां की सब बातें ही विचित्र हैं! उस घर में कोई भी ऐसा मनुष्य नहीं था, जो उस से दोचार घड़ी बात चीत करके उस का मन बहलावे। सब काठ की पुतलियों की भान्ति इधर उधर नाचते फिरते थे। यदि किसी को कोई कार्य्य करने के लिये कह दिया गया, तो उसने वह कार्य्य करदिया, नहीं तो खैर!————ठीक समय पर आकर यदि भोजन मांग लिया गया तो ज्योति को खाने को मिल गया। नहीं तो उस के लिये भूखा रहना एक असाधारण बात थी।

इन ही बातो पर विचार करते करते उसे हेमन्त की स्मृति आगई। सुख से जीवन व्यतीत करना कौन नहीं चाहता ? हेमन्त उस के ज्योतिर्मय हृदय अकर्पिक रूप पर मुग्ध होगया था। वह उस से स्नेह करता था। और यहां की अवस्था उस के सर्वथा विप्रीत थी। हेमन्त————छी! छी!! वह

क्या सोचने लगी ? यह सब अनुचित बातें हैं ? उन का वर्णन ही व्यर्थ है। उस का विवाह रुपये—पैसे और खाने पीने की वस्तुयों के साथ तो नहीं हुआ। फिर उसको इन बातो की चिन्ता क्यो ? जिस के संग उस का विवाह हुआ है, वह उसका पति उस की दृष्टि में देवता से भी अधिक श्रेष्ठ है।

जिस प्रकार संसार में पहिले पहिल नित्य नई वस्तु का आदर होता है। ज्योति का पति लक्ष्मी कान्त भी दो तीन मास तक उस का आदर करता रहा। और उस के शुभ गुणो के गीत गाता रहा।————इस के पश्चात ज्योति एक बार मायके गई————जब वह लौट कर आई, तो उस ने सुसराल में आकर बिचित्र ही अवस्था देखी। लक्ष्मी कान्त अब वह लक्ष्मी कान्त नहीं था। अब वह ज्योति को आदर की दृष्टि से नहीं देखता था। अब उस के हृदय में ज्योति के लिये वह सन्मान, वह प्रेम, वह स्नेह नहीं था, जो पहिले था।

महल की दीवारों की सब ईंटें भी इधर उधर हिल कर एक भयानकरूप धारण कर चुकी थीं। मानो अब उसके सुसराल की अवस्था ही परिवर्तन हो चुकी हो। सुसराल की यह अवस्था देखकर ज्योति पहिले तो कुच्छ चकित सी रह गई। किन्तु वह कर ही क्या सकती थी। लक्ष्मी कान्त के इस वर्ताव से उस के हृदय पर एक चोट लगी। जब वह मायेके गई थी तो वह अपने पति का वियोग बहुत बुरी तरह अनुभव किया करती थी। और उन के प्रेम पत्र की प्रति दिन व्याकुलता से प्रतीक्षा किया करती थी। पड़ोस की लड़कियां नित्य प्रति आकर टोह लिया करती थीं कि कोई पत्र तो नहीं

आया ?————किन्तु पत्र न आना था न आया। पड़ोस की लड़कियों को इस बात का समाचार मिला, तो वह परस्पर काना फूसी करने लिगीं। कोई कुच्छ कहती थी और कोई कुच्छ। शारदा के हृदय में यह सुनकर कि ज्योति का विवाह लक्ष्मी कान्त के साथ हो गया है, पहिले ही आग लगी हुई थी। वह प्राय: यह कहा करती थी कि निर्धन की कन्या और उसका ऐसा सौभाग्य ? क्या वह ज्योति को भली प्रकार दिन व्यतीत करते देख सकती थी ? एक दिन उसने ज्योति को सुना कर अपनी एक सखी से कहा था————"पहिले मेरी छोटी बहिन के साथ लक्ष्मी कान्त की मंगनी हुई थी। किन्तु मेरी माता इस विवाह के अति विरुद्ध थी। वहा कहा करती थी कि इस में कुच्छ संदेह नहीं कि धनवान घराने में कन्या का विवाह करने से कन्या को आभूषणों और कपड़ों की कुच्छ न्यून्ता नहीं रहती। किन्तु कन्या के साथ पति को इतना प्रेम नहीं होता जैसा कि एक निर्धन घराने के लड़के को अपनी पत्नि के संग होता है। यदि किसी निर्धन घराने की कन्या का, किसी उच्च और धनवान घराने के लड़के के संग विवाह हो भी जाये, तो चाहे वह कन्या कितनी ही सुशील और पति व्रता ही क्यों न हो, उस का वह आदर नहीं होता, जो आदर कि उस कन्या का, किसी निर्धन के लड़के से विवाह हो जाने पर होता है। यही कारण था कि मेरी बहिन का विवाह लक्ष्मी कान्त के साथ न होसका।

शारदा की इन बातों ने ज्योति के अंग अंग को ज़खमी कर दिया। और उसने स्पष्ट रूप में यह बात उसपर प्रकट करदी

कि खाओ, पीया और आनन्द करो, घूमो फिरो। बस इस से अधिक और कुच्छ प्राप्त करने की आशा करना तुम्हारे लिये व्यर्थ है। किन्तु उसने तो लक्ष्मी कान्त की कोई बुराई तो देखी ही नहीं————राग रंग खाना पीना, आमोद प्रमोद————भोगविलास————इन सब बातो से उसे घृणा है। फिर वह घर बार की चिन्ता क्यो करे ? पैसे कोड़ी का हिसाब रखना घर वालो की दृष्टि में अपने आपको उच्च बनाना है। यह उस का प्रथम कर्त्तव्य है।

एक लड़की ने जिसका नाम निर्मलप्रभा था और जो दूर के सम्बन्ध से ज्योति की ननद लगती थी, बातो बातों में यह बात उस की बुद्धि में अंकित कर दी, कि इस घर में आज तक कभी यह बात देखने में नहीं आई, कि अपनी पत्नि के साथ दिन में दो घड़ी के लिये भी पति ने कभी बात चीत की हो। इस लिये उस के लिये किसी प्रकार की चिन्ता करना उचित नहीं। किन्तु मेरी तो सुसराल में यह बातें नहीं"।

ज्योति ने उत्तर में कहा————"तुम्हारी इस बात से ज्ञात होता है कि इस घर की बहुयें अपने पतियों को तंग किया करती होगी। क्यों यही बात है न"?

निर्मल प्रभा ने कहा————"तुम्हारी जैसी सुन्दर वहु का परित्याग करके————मेरी समझ में नहीं आता कि बाबु जी बाहर दिन कैसे व्यातीत करते हैं। भावज जी! एक दिन छुपकर यह अवश्य देखना चाहिये कि यह लोग बाहर रहकर क्या करते है ?"

ज्योति ने कहा————"ननद जी! मैं यह क्यों कर देख सकूंगी। इस ओर पग बढ़ाकर बनवास का कष्ट अपने

सिर कौन ले ? एक दिन की बात है कि बाहर के आंगन में राग हो रहा था। मैं सामने वाली खिड़की से झांक कर देख रही थी। बस इतने में ही तुम्हारे बड़े बाबु जी ने आकर मुझे गालियां सुनाईं। अब मैं फिर ऐसा कार्य्य करके ————अपनी मौत स्वयं बुलाऊं ? यह मुझ से नहीं हो सकता ? ”

निर्मल प्रभा ने ज्योति की इन बातों पर कुच्छ ध्यान न दिया। वह कहने लगी,————“ वह जो नीचे भंडार घर है, उस में हर समय अन्धकार रहता है। ठीक उसके सामने बड़े बाबु जी की बैठक है। मध्य में एक छोटी सी खिड़की है। बस उसी कमरे म थोड़ी देर ठहरने और कान लगाकर सुनने से सब रहस्य खुल सकता है। चलो भावज जी। वहां चल कर देखें ? ”
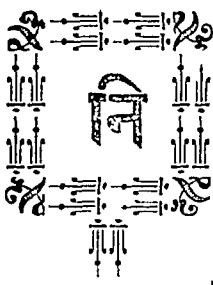
नि
र्मल प्रभा के अत्यन्त अनुरोध से विवश होकर अन्त में ज्योति ने भन्डार घर में जाकर सर्व प्रकार की बातों से परिचित होने का दृढ़ निश्चय कर लिया। और वह निर्मल प्रभा के बहुत कुच्छ कहने पर वहां एक दिन चली ही गई।

वह बातें और हो ही क्या रही थीं। सिवाये इन बातों के कि संसार में बड़े बाबु जी के समान सुन्दर, उन जैसा अपूर्व विद्वान कोई मनुष्य ही नहीं। इन दिनों हर जगह उन ही की तूती बोल रही है। हर जगह उन ही के गुण गाये जाते हैं।

अन्य पुरुषों के मुख से अपने पति के प्रति इस प्रकार के प्रशंसनीय शब्द सुन कर ज्योति दंग रह गई। उसे यह बातें

अच्छी न लगीं। वह निर्मल प्रभा से यह कहकर चली आई ——————" यदि तुझे तेरा भाई अच्छा लगता है और तू अन्य पुरुषों के मुख से उन के प्रति प्रशंसनीय शब्द सुनकर प्रसन्न हो सकती है तो इन बातो को सुन और हर्ष मना। मुझे तो यह बातें अच्छी नहीं लगतीं"।

वहां से आकर ज्योति सोचने लगी कि वह यह शेष समय क्योंकर व्यतीत करे। दोपहर के पश्चात घर के सब बालक और बालकायें सोकर अपना समय व्यतीत कर देते हैं। किन्तु वह किसी के समीप बैठ कर दो घड़ी मन बहलाये अथवा अपना समय सोकर व्यतीत करे, ऐसा तो उसके भागय में ही नहीं लिखा था। अब वह अपना समय किस प्रकार और क्योंकर व्यतीत करे, यह खयाल उस को हर समय बेचैन किये देता था।

उस ने निश्चय किया कि भविष्य में निर्मल प्रभा के पास बैठ कर वह अपना समय व्यतीत किया करेगी। और उस से बात चीत करके दो घड़ी मन बहलाया करेगी। किन्तु निर्मल प्रभा न जाने कहां मारी मारी फिरती है। उस को पकड़ कर रखना ज्योति के लिये टेढ़ी खीर था। घर की सेवकायें भी किसी काम की न थीं। यदि उसे पढ़ने केलिये दो चार पुस्तकें ही मिल जातीं, तो वह उन पुस्तकों को ही पढ़कर अपना समय व्यतीत कर देती। किन्तु इस घर में पुस्तकों का मिलना कठिन काम था। उस घर से ऐसी आशायें कहां?

उस को पुनः हेमन्त की समृति आगई। छी! छी!!

ज्योति अब अपने सुसर की सेवा किया करेगी। एक दिन यह सोच कर उसने उन के कमरे की ओर पग बढ़ाया। वहां जाकर दूर से उसने जो देखा, उस से उसको एक पग भी आगे बढ़ाने का साहस न पड़ा। उस के सुसर चारपाई पर बैठे तम्बाकू पी रहे थे। और घर की बहु बेटियों के अतिरिक्त दूर के सम्बन्ध की कुच्छ स्त्रियां पान चबाये उन के पास बैठी हास परिहास की बातें कर रही थीं।

यह दृश्य देख कर ज्योति के होश जाते रहे। वह तत्काल सहम कर खड़ी हो गई। कुच्छ देर के पश्चात वह उलटे पाओं अपने कमरे में लौट आई।

अपने सुसर को, उन स्त्रियों से जिनका उस के सुसर से दूर का सम्बन्ध था, इस प्रकार हास परिहास की बातें करते देख कर ज्योति के हृदय में इस घर के प्रत्येक मनुष्य से घृणा उत्पन्न होगई। वह मन ही मन में कहने लगी। घर में बालक बालकाओं, बहु बेटियों की उपस्थिती में सब के सामने यह क्या? क्या सब की आंखों से लज्जा लुप्त हो चुकी है?

इन बातों ने ज्योति के हृदय पर गहरा प्रभाव उत्पन्न किया। उस ने मन ही मन में यह दृढ़ संकल्प कर लिया कि भविष्य में वह भी दूसरों की भान्ति दोपहर का समय सोकर व्यतीत किया करेगी। जब कभी निर्मल प्रभा ज्योति से आ कर कहती—"भावज! चलो वहां चलकर बातें सुन आयें," तो

ज्योति बहुत बुरा मनाती। और कहती निर्मल प्रभा पागल है। वह इन सब बातो को जान कर क्या करेगी। ज्योति के हृदय में अपने सुसराल वालो के कार्य्य और उनके बर्ताव से पहिले ही घृणा उतपन्न हो चुकी थी। किन्तु रही सही कसर इस घटना ने निकाल दी। जिस का वर्णन नीचे किया जाता है।

एक दिन सख्त गर्मी थी। रात को नीन्द न आती थी। लक्ष्मी कान्त भी शयनालय में नहीं पधारे थे। रात के बारह बज चुके थे। ज्योति अपने बिस्तर से उठी, दबे पाओ कमरे से बाहर आई। आंगन के साथ उत्तर दिशा में एक छोटी सी छत थी। उस छत पर ज्योति कपड़ा बिछा कर लेट गई। चान्दनी रात थी। वह अनेक प्रकार के विचारों में निमग्न होकर आकाश की ओर देख रही थी। मन ही मन में इन बातों पर विचार कर रही थी। वह इतने बड़े जिमींदार के घर की बड़ी बहु है। अन्य लोग उसका सौभाग्य देख कर इर्षा करते हैं। अमूल्य आभूषणों से भरपूर बक्स———— जिन का नाम भी कभी कानों ने नहीं सुना था। जिन्हें स्वप्न में भी देखना प्राप्त नहीं हुआ था। हां! वही आभूषण ————किन्तु इन सब में उसे कितना सुख है, यह दूसरे मनुष्य क्या जाने? माता पिता भी न जानें इस रात बिस्तर पर पड़े हुये अपनी कन्या के सुख और सौभाग्य के कैसे विचित्र स्वप्न देखते होंगे? किन्तु उन्हें क्या मालूम कि उन की नाज़ो

पली कन्या अपने जीवन के दिन किस प्रकार पूर्ण कर रही है। और वह किन किन कष्टो में ग्रस्त है।

आकाश पर धुन्धला चान्द बादलों के बिखरे हुये टुकड़ों के साथ खेल रहा था———बादल, चान्द, बिजली मानो सब के सब मुसिकरा रहे थे। ज्योति ने समझा कि वह सब के सब उसकी वर्तमान दशा देखकर उपहास कर रहे हैं। और उस का विचार किसी सीमा तक सच्चा भी था। वह इन ही विचार माला में निमग्न थी कि अकस्मात किसी के दौड़ने की आहट उस के कानों में पड़ी। वह किसी खामोश मनुष्य के पाओ की आवाज़ थी। यह देखकर ज्योति चौक उठी। उस ने कुच्छ भय भी अनुभव किया। उस के हृदय मे आया कि वह उठकर देखे कि वह कौन है? किन्तु उसे ऐसा करने का साहस न पड़ा। उस ने देखा कि आंगन में दो मनुष्य इस ओर से उस ओर दौड़ रहे हैं? जिधर से ध्वनि आरही थी ज्योति ने सहमी हुई दृष्टि से उस ओर देखा। हैं वह कौन? लक्ष्मी कान्त निर्मल प्रभा का आंचल पकड़े खड़ा था। यह दृश्य देख कर ज्योति दंग रह गई। ज्योति ने सोचा मैं कहीं स्वप्न तो नहीं देख रही। अपना भ्रम दूर करने के भाव से उस ने आंखे फाड़ फाड़ कर देखा और कहने लगी ———"नहीं, यह स्वप्न नहीं हो सकता? यह सर्वथा सच्ची घटना है? स्पष्ट रूप में दिखाई देने वाली सच्चाई है। इसे स्वप्न कौन कह सकता है?

लक्ष्मी कान्त उस समय निर्मल प्रभा का हाथ पकड़कर बार बार उसके कपोलो का चुंबन ले रहा था। यह देख कर ज्योति का हृदय स्थिर न रह सका और उस के समस्त शरीर का रक्त पानी हो गया। आंखें क्रोध से जल उठीं। उसने वहां से उठने का घोर प्रयत्न किया। किन्तु वह सफल न हो सकी। उस की ऐसी दशा से ऐसा ज्ञात होता था कि उस को किसी शक्ति शाली हाथों ने जकड़ रक्खा है। और वह उसको लेटे रहने पर विवश कर रहा है। एक गहरी सांस लेकर उसने, अपनी आंखें फिर बन्द करलीं। उस ओर से फिर आवाज़ आई। आंखें स्वयं खुलकर उस ओर देखने लगीं। उसने देखा निर्मिल प्रभा सिर नीचा किये भागने की चेष्टा कर रही है। और लक्ष्मी कान्त उसे छाती से लगाये हुये है। ज्योति के लिये अपनी आंखों से अब यह दृश्य देखना असह्य था। उसने अपने आप को संभाला। छाती को दोनो हाथों से थाम कर वहां से उठकर अपने कमरे में पहुचते ही विस्तर पह लेट गई। तकिये में मुंह छुपालिया। वह हृदय खोल कर रोना चाहती थी। किन्तु आंखों से आंसु नहीं निकलते थे। इस असह्य वेदना से उसका समस्त् शरीर आग की भान्ति जल रहा था। उसके हृदय में न जाने किस ने आग लगादी।

विस्तर पर पड़े पड़े वह सोचने लगी——————यह क्या?——————संसार में यह क्या अभिनय हो रहा है?

चारों ओर पाप——— छल-कपट झूट———चोरी ———यह क्या बात है ? निर्मल प्रभा का विवाह हुये कई मास व्यतीत हो चुके हैं ? उस का पति जीवित है। दूर परदेश में पड़ा हुआ उसी की याद कर रहा होगा ? और यह इस प्रकार उस के वियोग में अन्य पुरुषों के संग भोग विलास कर रही है।———रंग रलियां मना रही है ———और लक्ष्मी कान्त उस का पति जिसे वह देवता के समान पवित्र समझती थी। और जिसकी वह देवता के सदृश पूजा किया करती थी। वह ऐसा नीच !——— अधम !!———इतना पापी !!! इस के अतिरिक्त वह इन बातों पर भी विचार करने लगी कि लक्ष्मी कान्त ने निर्मल प्रभा में कौन से गुण देखे है। जिन पर मुग्ध होकर वह उस पर जान देता है। क्या सौन्दर्य———रूप लावन्य में तो निर्मल प्रभा ज्योति के पैरो की धूलि भी नहीं। क्या वह उस के योवन पर मरते हैं ?———ज्योति के सन्मुख तो निर्मल प्रभा मांस और हड्डियो का एक बेडोल सांचा है। निर्मल प्रभा में फिर वह कौन सा गुण है जिस ने उन्हें उस के पीछे इस तरह मारा मारा फिरने पर विवशकर दिया है। और जिस के कारण वह, अपनी चान्द जैसी पत्नि को दृष्टि में नहीं लाते। उसकी इन बातों को देख सुन कर उस के मन में अपने योवन को तेज़ छुरी से काट कर टुकड़े टुकड़े कर देने की भावना उत्पन्न होती थी। किन्तु न जाने किस भाव या

खयाल ने उस को ऐसा करने से वञ्चित रक्खा। वह फिर सोचने लगी————कल निर्मल प्रभा कौन सा सुख लेकर उस के सन्मुख खड़ी होगी। मस्तक से यह कलक कालिमा धोकर वह किस प्रकार मुझे "भावज जी" कह कर पुकारेगी। और लक्ष्मी कान्त!————ज्योति ने उसे बिलकुल सीधा साधा सरल स्वभाव समझ रक्खा था, यही कारण था कि किसी समय ज्योति को लक्ष्मी कान्त पर दया आ जाती थी। किन्तु वह ऐसा निर्दयी! घृणा से उसका हृदय उस घर को परित्याग कर कहीं भाग जाने के लिये बलियो उछलने लगा। वह लक्ष्मी कान्त आकर उसे हाथ लगायेगा। उस से प्रेम भरी बात चीत करेगा————इसी मुख से?————उसका अपनी बहिन निर्मल प्रभा से यह बुरा बर्ताव————ऐसी अनुचित क्रिया————छी! छी!!

इस समय उसे फिर किसी बीती हुई घटना की स्मृति आगई। हेमन्त का वह घृणा जनक बर्ताव————पुरुष स्त्रियों के विशवास को किस तरह पग दलित करते हैं। उनको नष्ट-भ्रष्ठ करने के लिये वह सदैव कैसे कैसे अवसरो की खोजमें रहते हैं। हाये भगवान! अबला स्त्रियों को तूने उत्पन्न ही क्यों किया? ऐसे निष्ठुर हृदय, क्रूर पुरुषो के संग उन का कोमल, पवित्र, दया की प्रतिमा हृदय क्यो बान्ध दिया? वह अभी इन ही बातों में निमग्न थी कि इतने में उसे पास ही किसी के पैरों की चाप सुनाई दी। उसने चौंक कर

देखा निर्मल प्रभा लज्जा से सिर झुकाये उस के सन्मुख खड़ी है। चान्द की चान्दनी में उस का मुख मंडल स्पष्ट रूप में दृष्टि गोचर हो रहा था। ज्योति ने उस की ओर घृणा का दृष्टि से देखा। तत पश्चात अपना मुख तकिये में छुपा लिया।

निर्मल प्रभा ने पुकारा————"भावज जी!" ज्योति के मन में आया इस निर्लज्ज कुल कलंकनी निर्मल प्रभा के मुख पर पल चपत लगाये। किन्तु वह अज्ञात कारण से ऐसा न कर सकी।

निर्मल प्रभा ने ऊंचे स्वर से पुकारा————"भावज! भावज!!"

ज्योति उसको इस प्रकार बात चीत करते देख दंग रह गई। वह अपने मन में कहने लगी कि ऐसी निर्लज्जता की क्रिया करके क्या कोई स्त्री इस प्रकार बातें कर सकती है? और फिर किस के साथ————? उस के साथ जिस का हृदय विष भरी छुरी से टुकड़े टुकड़े कर दिया गया है। जिस का पवित्र हृदय आकारण ही मसल डाला गया है।———— उसके साथ? उसके लिये इस से बढ़कर आश्चर्य की बात और कौन हो सकती थी।

निर्मल प्रभा ने पुनः पुकारा————"भावज!"

सोने का बहाना करके ज्योति ने करवट ली। आंखें नहीं खोलीं।

निर्मल प्रभा ने पुनः पुकारा————"भावज! आज क्या

सख्त नीन्द आई है ?" घृणा और क्रोध से ज्योति का हृदय अन्दर ही अन्दर जोश मार रहा था। उसने एक गहरी सांस ली——————आंखें नहीं खोलीं।

"उफ! सख्त नीन्द आई है"। यह कहकर निर्मल प्रभा चली गई। नामालूम कहां?

(१५)

निर्मल प्रभा के चले जाने पर नजाने ज्योति के हृदय में क्या समाई। वह मन ही मन में विचार करने लगी————"मैं ने बहुत बुरा किया जो इस समय निर्मल प्रभा से बात तक न की। क्या अजब, निर्मल प्रभा उसे अपनी दुःख भरी कथा सुनाने आई हो? और सम्भव है जो बातें हुई हैं वह उसकी इच्छा के प्रतिकूल हो और उस से बलात्कार की गई हों। इस में तो उस का कोई अपराध दृष्टि गोचर नहीं होता! निर्मल प्रभा एक अबला और परवश स्त्री है। सम्भव है कि क्रूर————पापी की निर्दयता से तंग आकर उसे यह सब कुच्छ सहन करना पड़ा हो। सम्भव है वह अपना सतीत्व बचाने के विचार से मेरे पास दौड़ी आई हो। कहीं वह

इस कार्य्य में मेरी सहायता न लेने आई हो। इनही विचारों ने उसे चैन से बिस्तर पर लेटने न दिया। वह बिस्तर से उठ खड़ी हुई। और निर्मल प्रभा की खोज करने लगी।

नामालूम निर्मल प्रभा कहां चली गई। परन्तु अत्यन्त खोज के पश्चात उसने निर्मल प्रभा को जा ही लिया। आंगन के बाद छत थी। जब यह आंगन पार करके छत के द्वार के के समीप पहुंची तो उसने जो देखा, उस से उस की आंखें रंज और क्रोध के मारे जल उठीं। दहलीज़ पर लक्ष्मी कान्त बैठे थे। और उन की जांघों पर सिर रखे हुये निर्मल प्रभा सो रही थी। वह स्वप्न में ऐसी लीन थी, जैसे कोई योवन की मस्ती से चूर होकर सो रहा हो। यह दृश्य देख कर ज्योति के पैरों तले से मिट्टी निकल गई। वह इस दृश्य की ताब न लासकी और अपने आप को संभाल न सकी। आंगन में ही दीवार का आश्रा लेकर वह बैठ गई। उसकी आंखों के सामने चान्द की ज्योत्सना पर किसी ने घनिष्ट अंधकार का काला पर्दा डाल दिया। उसकी आंखो के आगे अन्धकार छा गया। जब वह कुच्छ होश में आई। उस समय पवन के ठंडे झौंके धीरे धीरे अठकेलियां करने लगे थे। अब भी ज्योति उसी तरह अचेत पड़ी कांप रही थी। ज्योति के अंग अंग से पसीना टपक रहा था। पवन के ठंडे झौंकों के शरीर पर लगने से उसने अनुभव किया, जैसे किसी अदृश्य देवता ने उस के शरीर पर ईर्षा का उबट्टन मल दिया हो ? आंचल के सिरे से उसने मस्तक का पसीना साफ किया। अन्त में वह चेष्टा कर

के उठ बैठी। छत की ओर ध्यान की दृष्टि से देखने का उसे साहस न हुआ। उसकी आंखों के सन्मुख वह भय कारक दृश्य फिरने लगा। भूत के भय मे जिस प्रकार नन्हा बालक अन्धकार की ओर नहीं देखता———इच्छा होने पर भी ज्योति छत की ओर ध्यान से न देख सकी। उस समय वह छत भयजनक दृष्टि गत होती थी। वह दवे पाओं अपने कमरे में आकर भुमि पर बैठ गई। बिस्तर पर वह लेटना नहीं चाहती थी। मानों उसके विचार में उस बिस्तर पर कांटे बिछे हुये थे, जो उसे सुख से सोने नहीं देते थे।——— उसी बछौने पर वह एक दिन लक्ष्मी कान्त के साथ निर्भयता और निश्चिन्तता से सोई थी। उस की झूटी और कपट भरी बातों पर विश्वास करके उस ने अपने जीवन को शुभ समझा था, और वह अपने सौभाग्य पर गर्व करने लगी थी।

उसे पुनः निर्मल प्रभा का खयाल आया। वह मन ही मन में ऐसी बातों पर विचार करने लगी। ओह! इतनी निर्लज्जता! एक अपरिचित मनुष्य के साथ एक बिस्तर पर ज्ञानवान और स्यानी होने पर भी कैसे लेट गई। उसे ऐसा करते लज्जा भी न आई। हेमन्त मेरा पड़ोसी था। उस से मेरी जान पहिचान भी हो गई थी। किन्तु फिर भी उस के साथ उठने बैठने बात चीत करने पर जाति वालों ने बुरा मनाया था। उस दिन उस की माता ने भी यही बात कही थी। निरुपमा ने भी उस बात की चर्चा करते हुये मेरा

मज़ाक उड़ाया था। किन्तु लक्ष्मी कान्त के साथ मेरे निर्भयता से बात चीत करने और उठने बैठने पर अब जाति वाले क्यों बुरा नहीं मनाते ? इस का कारण ? माता पिता ने भी बिना सोचे समझे किसी अन्य अपरिचित के साथ प्रसन्नता पूर्वक मुझे उसके घर इतनी दूर भेज दिया। यह क्यो ? क्या इसी निर्लज्जता का नाम विवाह है।

जितना वह इन बातो पर विचार करती थी। उतनी ही उस के हृदय में सुसराल वालो से घृणा उत्पन्न होती जाती थी। उसे वह महल नरक की भट्टी ज्ञात होता था। वह मन ही मन में कहने लगी इन दीवारो से घिरे हुये महल को परित्याग करके किसी हवादार खुले स्थान में जाकर हृदय खोल कर काश! मैं गहरी सांस लेसकती ? वह इस पापयुक्त घर की गंदी वायु में सांस लेकर अपने मन तथा बुद्धि को प्रागंधा नहीं करना चाहती थी। किन्तु अब वह क्या करेगी ? और इस पाप युक्त घर से किस प्रकार मुक्ति प्राप्त करेगी। वह इन ही विचारों में निमग्न थी कि अकस्मात निद्रा ने उस की आंखों पर अधिकार जमा लिया। वह उसी जगह भुमि पर आंचल बछा कर लेट गई। अब उसे कमरे से बाहर जाने तथा लोगों को अपना मुख दिखाने का साहस ही न हुआ। वह अपने आपको सब की दृष्टि में अधम और दया के योग्य समझने लगी। और मन ही मन में कहने लगी——————

"ऐसा सौभाग्य————पहाड़ में जाये————

इस महल से तो उसके पिता का वही छोटा सा टूटा फूटा घर ही उसके लिये स्वर्ग था————वह इतने बड़े घर में क्या आग लगाये।"

अभी वह लेटी ही थी कि इतने में निर्मल प्रभा ने आकर पुकारा————"भावज जी! भावज जी!! सो रही हो क्या"?

उस का स्वर कांप रहा था। ज्योति ने फिर सोने का बहाना नहीं किया। वह उठ बैठी।

निर्मल प्रभा ने कहा————"क्या गरमी के कारण भुमि पर सोई थीं।"

ज्योति को हंसी आगई, कहने लगी————"हां गरमी के कारण?"————

निर्मल प्रभा ने उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना ही कहा ————"मैं भी भली प्रकार नीन्द भर कर नहीं सोई। भावज जी! बड़े बाबु जी उठकर चले गये।"

ज्योति को निर्मल प्रभा की इस बात से सख्त क्रोध आ गया, किन्तु उसने क्रोध को दबाते हुये तीव्र दृष्टि से उसकी ओर देखा और मन ही मन में कहने लगी————"निर्मल प्रभा की यह अवस्था क्यों?"

निर्मल प्रभा ने कहा————"तुम्हारा चेहरा इतना उतरा हुआ क्यों है? ज्ञात होता है कि बड़े बाबू जी तुम से असन्तुष्ट होकर चले गये हैं।"

ज्योति निर्मल प्रभा की यह बात सहन न कर सकी। वह मन ही मन में कहने लगी————" यह बड़ी निर्लज्ज है। इसकी निर्लज्जता की कोई सीमा नहीं। इच्छा होती है कि मैं बिजली की भान्ति गर्ज कर चारों ओर हलचल मचादूं। किन्तु नहीं! ऐसा करने से अपने ही सन्मान में अन्तर आने की सम्भावना है। जब तक वास्तविक कारण ज्ञात न हो और जब तक वास्तविक कारण पूछ न लिया जाये, इस घटना के सम्बन्ध में ध्वनि निकालना अत्यन्त मूर्खता है। यह सोच कर जिह्वा पर आई हुई बात को दबा कर कहने लगी————"हां!"

निर्मल प्रभा ने कहा————"क्यो भावज जी!"

————"तु इन बातो को पूछकर क्या करेगी?

————"कुछ नहीं योंही पूछा था।"

निर्मल प्रभा का यह बात चीत का ढंग और उसका यह रंग देखकर ज्योति को अपनी आंखो पर एक बार शंका हुई! क्या उस की आंखो ने कल रात जो देखा था वह धोका था————स्वप्न था————नहीं! नहीं!! यह स्वप्न नहीं होसकता। आंखो देखी बात————यह धोका नहीं हो सकता————और न झूट ही हो सकता है। यह एक सच्ची घटना थी! क्रोध से उस की आंखें लाल हो गईं। सिर में चक्कर आने लगा। निर्मल प्रभा की ओर तिर्छी नज़र से देख कर ज्योति अपने कमरे से चिंगाड़ी की भान्ति बाहर हो गई।

(१६)

दो पहर का समय था। ज्योति अपने कमरे म बैठी हुई इस घटना पर मन ही मन में विचार कर रही थी। उस समय भी उसका हृदय क्रोध और दुःख की आग से सुलग सुलग कर जल रहा था। वह मन ही मन में कह रही थी ——————"काश ! इस प्रचन्ड अग्नि की लपटो से वह भी किसी तरह जल कर राख हो सकती !" क्या कभी ऐसा न होगा ?——————हाये भगवान !"। ठीक उस समय बाहर किसी के पाओ की चाप सुनाई दी ! ज्योति ने सिर उठाकर देखा——————लक्ष्मी कान्त !——————ऐसे बुरे समय वह लक्ष्मी कान्त को अपने कमरे की ओर आते देख कर उठ

खड़ी हुई। और चारपाई पर बैठने के लिये इशारा किया——————

लक्ष्मीकान्त ने चारपाई पर बैठते ही पुकारा——————"ज्योति!"

ज्योति टकटकी लगाये लक्ष्मी कान्त की ओर कुछ देर तक देखती रही, कोई उत्तर न दिया——————वह अचेत खड़ी रही।

——————"समीप आओ न?"

——————"क्यो?"

——————"क्या नहीं आना चाहिये?"

——————"अकस्मात ऐसी कृपा दृष्टि क्यो?"

——————"अकस्मात क्यो? क्या पति को अपनी पत्नि के पास नहीं आना चाहिये?"

——————"नहीं! दिन दोपहर में लोग क्या कहेंगे?"

——————"लोगो के भय से मै अपना आमोद प्रमोद——————सुख—उल्लास क्यो मिट्टी में मिलाऊं! आओ ज्योति! आओ!!" यह कहकर लक्ष्मी कान्त उठ खड़े हुये।

ज्योति फिर भी न आई। उसके पश्चात लक्ष्मी कान्त ने ज्योति के पास जाकर उस के दोनो हाथ पकड़ लिये। और कहने लगा।——————"कैसा योवन बरस रहा है? ज्योति तुम अतीव सुन्दरी हो!"

"ठहरो तुम्हें इतनी बातें बनाने की आवश्यकता नहीं।"

————(हाथ जोड़कर) "नहीं ! नहीं !! मैं बातें नहीं बनाता—सच्ची बात कह रहा हूं"।

ज्योति चुप खड़ी रही।

————"समझ गया तुम असन्तुष्ट होगई हो ?"

————"असन्तुष्टता कैसी ?"

————"कल रात तुम्हारे पास सोने नहीं आसका। क्या करू किसी के यहां दावत थी। इस लिये न आ सका। अभी अभी घर आया हुं"।

————"चोर झूटा ! पापी !! पाप भी करते हो और निर्लज्जो की भान्ति झूट बोलकर उस पाप पर पर्दा डालना चाहते हो————इतनी बातें बनाने की क्या आवश्यकता थी ?————कुच्छ नहीं।"

ज्योति सख्त लकड़ी के समान खड़ी रही। वह अपनी रक्त भरी तीव्र दृष्टि से लक्ष्मी कान्त का हृदय टटोल रही थी। लक्ष्मी कान्त ने पुन. ज्योति के हाथ पकड़ लिये। ज्योति ने सम्पूर्ण शक्ति से अपने हाथ छुड़ाने की चेष्टा की किन्तु वह किसी तरह न छुडा सकी। अन्त करख्त लहजे में कहने लगी। "छोड़ो भी"।

ज्योति का ज्योतिर्मय मुख मंडल और रक्त भरी लाल आंखें देखकर लक्ष्मी कान्त ने पुकारा————"ज्योति !"

इस के पश्चात उसने ज्योति को बलात्कार अपनी छाती

कर उसके प्रचन्ड मुख कपोलो का चुम्बन ले लिया।

दुःख, क्रोध, गर्व से ज्योति आग भबूका हो गई। एक झटके में स्वयं को लक्ष्मी कान्त से छुड़ा कर वह कुछ दूरी पर जा खड़ी हुई। और कहने लगी———"हट जाओ!" मुझे यह सब कुच्छ अच्छा नहीं लगता।"

लक्ष्मी कान्त ध्यान से ज्योति की ओर देखते रहे और अन्त में प्रसन्नता कारक स्वर में कहने लगे——— "ज्योति!"

लक्ष्मी कान्त की आंखो में काम वासना की झलक दृष्टि गोचर हो रही थी। उस समय ज्योति वास्तव में ज्योतिर्मय सौन्दर्य से जगमगा रही थी। और उसके इस निखार में विशेष प्रकार की अकर्षण शक्ति थी। आज उस ने स्नान नहीं किया था। बीती हुई रात्री की जागृति! चिन्ता, ईर्षा, दुःख, कष्ट, हार्दिक वेदना इन सब ने परस्पर मिल कर उस के चेहरे को निराले और नये सांचे में ढाल दिया था। घुघराले केशों की ज़ुलफ़ें चेहरे पर बल खाई हुई काली नागिन की भान्ति लोट पोट हो रही थीं। लक्ष्मी कान्त इस दृश्य की ताब न लासके। ऐसे समय में, ऐसी पोशाक में, ऐसे रुप में उन्हों ने ज्योति को पहिले कभी नहीं देखा था। ज्योति का यह मुरझाया हुआ चेहरा उनकी रग रग में चंचलता उत्पन्न कर रहा था। उन्हों ने फिर पुकारा————"ज्योति"! ——"तुम इस कमरे से तत्काल बाहर चले जाओ"।

————"क्यों? अन्त मैं भी तो सुनू? तुम मुझे

आज क्यों घृणा की दृष्टि से देख रही हो " ?

———"नहीं ! मैं नहीं बतला सकती " ! ज्योति ने यह बात कठोर लहजे में कही थी ।

———"मै तुम्हारा पति हु " ।

———"हां इस में क्या संदेह है। सब संसार जानता है । मैं भी जानती हूं । इस समय तुम्हें इस कमरे से चला जाना ही उचित है, नहीं तो मुझे स्वयं यह कमरा छोड़ना पड़ेगा " ।

ज्योति को लक्ष्मी कान्त का यह ढग बहुत बुरा लगता था । वह मन ही मन में कहने लगी———" संसार में इतना छल कपट ! यहां ऐसे ऐसे खेल हो सकते है ? यह उसे ज्ञात न था । वह सच्ची बात कहने पर स्वयं हर प्रकार के कष्ट सहन करने और संकट झेलने को तत्पर थी, किन्तु उसे झूठा निमक मिर्च लगाना नहीं आता था । उस ने अब यह दृढ़ सकल्प कर लिया कि वह भविष्य में पाओं से कुचली हुई नागिन की भान्ति फन निकाल कर बैठेगी। और अभागे, पापी लक्ष्मी कान्त पर स्पष्ट रूप में प्रकट कर देगी । कि यद्यपि वह एक निर्धन ब्रह्मण की कन्या है, किन्तु उसकी छाती में भी हृदय है। और हृदय का मूल्य इतने बड़े जिमींदार की निधि से भी कहीं बढ़कर है। ऐसे अमूल्य हृदय को इस प्रकार पग—दलित करना, वह किसी प्रकार भी पसन्द नहीं करेगी । इस महल में जो रात दिन भयकारक अभिनय खेले

जा रहे हैं। उन भयकारक खेलों को बन्द करने के लिये ज्योति अपने अन्दर अद्भुत शक्ति रखती है।

उस के हृदय में यह भावना उत्पन्न हुई कि लक्ष्मी कान्त की वासना पूर्ण—पाप भरी दोनों आंखों की पुतिलियों को इस समय निकाल कर उसे सदा के लिये अंधा करदे, किन्तु न जाने किस खयाल ने उसे ऐसा करने से वञ्चित रक्खा

इस समय लक्ष्मी कान्त के हृदय में वासनाओं की आग जल रही थी। वह लडखडा कर ज्योति पर गिर पडा।

ज्योति का सोया हुआ क्रोध इस चोट से जाग उठा। उसने लक्ष्मी कान्त को धक्का देकर कहा——————"क्या करते हो"? सावधान! मुझे हाथ न लगाना"।

लक्ष्मी कान्त सहमे हुये खडे थे। उस समय ज्योति की रग रग कांप रही थी। उसने लक्ष्मी कान्त को सम्बोधित करते हुये कहा——————"कल रात नहीं आसके! इस के लिये मेरे सन्मुख आकर झूटी बातें बनाने की तो कोई आवश्यकता नहीं थी? मैं वेश्या नहीं हूं। कल रात को जो कुच्छ हुआ है, वह सब का सब मैं ने अपनी आंखों से देखा है। यह न समझना?——————कि मैं तुम्हारा ठाठ देखकर तुम से डर जाऊंगी। मैं अपना मन मारकर यहीं एक कोने में पड़ी रहुंगी। मैं भी मनुष्य हूं, कोई पशु नहीं। सब कुच्छ समझती हूँ। मुझ में भी बुद्धि है। सोचने समझने की शक्ति है।"

लक्ष्मी कान्त ज्योति के उपरोक्त शब्द सुन कर दंग रह गये। ज्योति का यह भय कारक रूप उन्हों ने पहिले कभी नहीं देखा था।

ज्योति ने पुन: कहा———"घर में ऐसे नीच कर्म करने पर क्या तुम्हें लज्जा न आई। और फिर यह मुखलेकर मेरे पास प्रेम का राग अलापने आये हो ? इस मुख पर अब भी पाप का कलंक लगा हुआ है। अत्यन्त आश्चर्य की बात है कि तुम्हे फिर भी लज्जा नहीं आती। परन्तु तुम्हारे इस नीच कर्य को देख कर मेरा हृदय लज्जा से पानी पीनो हो रहा है। और सिर में इतना सख्त दर्द हो रहा है, जैसे किसी विषाक्त पक्षी ने काट खाया हो।———निर्मल प्रभा तुम्हारी बहिन———अन्य की पत्नि———ऐसा तृस्कार के योग्य कुकर्म———छी! छी!!"

लक्ष्मी कान्त ज्योति की बातें सुनकर बादल की न्याईं गरज पड़े। और कहने लगे। ———"क्या तुम्हें ऐसा साहस होगया है कि मुझ पर आंखें निकाले। चल मेरे घर से निकल जा———"

ज्योति अचेत खड़ी रही। भूखे सिंह की भान्ति लक्ष्मी कान्त ज्योति पर टूट पड़े। और कड़क कर बोले——— "निकलो! तत्काल निकलो!! मैं जो करूंगा उस में आक्षेप करने वाली तु कौन है। जानती है ? निकल चड़ेल"!

ज्योति ने कहा———"मैं चलीजाऊंगी! किन्तु मेरी

एक प्रार्थना है। इस तरह शोर मत करो। मुझे अपनी रुसवाई या बदनामी का भय नहीं, किन्तु इन बातों से तुम्हारे ही नाम पर कलंक लगेगा"।

————"मुझे इस की तनिक भी परवाह नहीं। संसार में ऐसा कोई मनुष्य नहीं, जो हर बात पर मुझे बुरा भला कहे। और फिर यह तो मेरा अपना घर है। किसी के बाबा का इस में क्या दखल————निकल"।

तत् पश्चात लक्ष्मी कान्त ने ज्योति के केश बलात्कार पकड़ लिये। ज्योति अपने आप को सम्भाल न सकी। उस समय लक्ष्मी कान्त ने भुमि पर बेसुध तथा अचेत पड़ी हुई ज्योति को लातों से खूब मारा।

कोलाहल सुन कर बाहर से एक दो सेवकायें भी भाग कर आगईं। निर्मल प्रभा भी आई। उस ने बीच में पड़कर लक्ष्मी कान्त को मार पीट से वञ्चित रक्खा।

उस समय भी लक्ष्मी कान्त चिल्ला रहे थे।———— "निकालदो————अभी————इसको घर से निकालदो"।

निर्मल प्रभा ने लक्ष्मी कान्त को सम्बोधित करते हुये कहा————"तुम बाहर जाओ। भला कोई ऐसा भी करता है। छी"।

लक्ष्मी कान्त चले गये। उस समय निर्मल प्रभा ने ज्योति के पास आकर पुकारा—— ——"भावज जी।"

ज्योति ने कुच्छ उत्तर न दिया। वह इसी तरह वेसुध पड़ी रही। निर्मल प्रभा ने एक सेवका को पानी लाने के लिये भेजा। स्वयं ज्योति का सिर अपनी जांघों पर रख कर बैठ गई। एक सेवका पंखा करने लगी। पानी आने पर निर्मल प्रभा ने ज्योति के मुख पर पानी के छींटे दिये। बहुत देर के पश्चात ज्योति ने एक दीर्घ सांस लेकर आंखें खोलीं। निर्मल प्रभा ने पुकारा——— "भावज जी"।

ज्योति ने लाल पीली दृष्टि से देखा कि वह निर्मल प्रभा की जांघों पर सिर रक्खे सो रही है।

निर्मल प्रभा ने फिर पुकारा——— "भावज जी"।

ज्योति ने फिर एक बार आंखें खोल कर धीरे से कहा ——— "हां"।

———

(१७)

निर्मल प्रभा ने ज्योति से कोई बात छुपाकर न रक्खो। उसे सब बातों से परिचित कर दिया। काम वासना के जाल में फंस कर वह अंधी हो गई थी। वह वासनाओं का शिकार हो चुकी थी। उस की बुद्धि ठिकाने न रही थी। वह क्या करेगी————वह तो इस विषय में विल्कुल विवश थी————और उसके स्वामी!—आह! उनके स्नेह और प्रेम की बात, जब उसे याद आती थी, उस समय निर्मल प्रभा की छाती दुःख और पश्चाताप से फटने लगती थी। किन्तु वह कर ही क्या सकती थी। अब यह बात उस के वस में न थी। उस की शक्ति से वाहर थी।

इस बार क्या वह अपनी इच्छा से यहां आई थी? उस

का विचार यहां आने का न था। इस जगह से उसे विशेष घृणा थी। जब उस के स्वामी ने बार बार कहा———
"कि तुझे यहां रहते हुये काफ़ी समय व्यतीत हो चुका है। और साथ ही मुझे भी मास ढेड़ मास के लिये कहीं बाहर जाना है। इस लिये यह समय वहां अपने मामूं के पास व्यतीत करना तेरे लिये अच्छा होगा"। और साथ ही यह भी बतला देना आवश्यक खयाल करता हूं कि मै तुझे इस जगह अकेला छोड़ना भी उचित नहीं समझता। यदि ईश्वर न करे, मेरे वियोग में तु कहीं किसी रोग में ग्रस्त हो गई। तो यहां तेरी सेवा करने वाला कौन होगा? कौन तेरी सुश्रुषा करेगा। इस के अतिरिक्त तेरी आयु भी थोड़ी है। तू अकेली परदेश में कैसे रहसकेगी। इस लिये निर्मल प्रभा! तुझे उचित है कि तु अब अपने मामू के यहां चली जा! जब मैं काम से निबृत होकर यहां आऊंगा, तो फिर तुझे अपने पास बुला लूंगा"!

परन्तु क्या अपने स्वामी को इन बातों से निर्मल प्रभा की छाती छिलनी नहीं हो गई थी। क्या उसने यह सब बाते धीर्य्य और शान्ति से सुनी थीं। किन्तु यह बेचारी यह कैसे कहती————"नहीं! जी नहीं!! मै वहां नहीं जाऊंगी। वहां जाने से तो मेरे लिये सिंह की मान्द कहीं अधिक सुरक्षित है। पाप भरी कथा सुना कर वह अपने स्वामी के सुनहरी स्वप्न को भंग नहीं करना चाहती थी। उनके हार्दिक

भावोंको यह पग दलित नहीं करना चाहती थी,उसे क्या खबर थी कि उसपर इतने जुल्म तोड़े जायेंगे ? उसका सतीत्व भंग करके उसकी परतिष्ठता को नष्ट कर दिया जायेगा और यहां की बातें उस के शरीर को कांटे की न्याईं चुभने लगेंगी।

परन्तु वह अपने स्वामी के मान और परतिष्ठता में न्यून्ता नहीं आने देगी। वह सब कुच्छ प्रसन्नता पूर्वक सहन करेगी, किन्तु अपने पति के नाम पर कलंक नहीं लगने देगी। इतना सु.ख! इतना सन्मान!! इतना विश्वास!!! वह रात दिन आग में जलती थी, किन्तु फिर भी किसी न किसी प्रकार इस आग को उसने अपनी छाती में छुपाये रक्खा। और अपने अंधे स्वामी को सर्व सुखो से वञ्चित नहीं होने दिया। जब उस के स्वामी ने उसे विरह—सागर में डाल दिया, उस समय भी उसका हृदय अन्दर ही अन्दर उस प्रज्वलित अग्नि में जल रहा था। और उसने उस अग्नि की एक चिंगाड़ी भी अपने स्वामी तक नहीं पहुंचने दी। ऐसा क्यो हुआ? आह! उस अन्धेरी रात की स्मृति आते ही उसका समस्त शरीर कांप उठता था।

विवाह के दोतीन मास पश्चात,जब वह सुसराल से यहां आई, तो उस समय उस का हृदय निराशा से भरपूर था। उसे कुच्छ अच्छा न लगता था।————“एक स्त्री को खोकर स्वामी बाहर जा खड़े हुये थे———— मुझ से विवाह करके उन्हो ने पुन. गृहस्थ आश्रम में प्रवेश किया था।”

ऐसे स्वामी के प्रेम की क्या कोई सीमा है? यह बातें याद आते ही वियोग की यह सुनसान घड़ियां व्यतीत करना उसे अति कठिन हो जाता था। वह बीते हुये दिनों के सुख की स्मृति में निमग्न हो कर किसी तरह अपने यह दिन व्यतीत कर रही थी।

एक रात उसने विचित्र स्वप्न देखा। स्वामी की गोद में उस ने अपनी सर्व आशाओं, अकांषाओं, अभिलाषाओं और लालसाओं को इस प्रकार डाल दिया था, जिस प्रकार पुजारी अपने देवता पर फूल चढ़ाता है। आंखें मल कर जब उसने ध्यान से देखा तो स्वयं को दो प्रबल हाथों में जकड़े हुये पाया। वह चौंक उठी। यह कौन? यह तो मेरे स्वामी नहीं ————यह तो लक्ष्मी कान्त हैं?

हम जिस समय का वर्णन कर रहे हैं। उस समय लक्ष्मी कान्त का अभी विवाह नहीं हुआ था। भय से वह चिल्ला उठी। ठीक उस समय लक्ष्मी कान्त ने दोनों हाथों से उस का मुख बन्द करके कहा————"चुप"।

इस के पश्चात इस भय से कि कहीं लोगों के कानों में इस विषय की भंक न पड़ जाये। उन्हों ने मुझे साफ छोड़ दिया। इसी दुःख और चिन्ता में उसने अपना सब शरीर जला कर राख कर दिया था। उस ने कैसे कठोर कष्ट सहन किये हैं। यह वही जान सकती है। अन्य मनुष्यों को क्या मालूम? उस समय वह अपनी जान पर खेलने को तत्पर हो

गई थी। कितनी ही बार उसने अपने गले में फांसी लगाकर सदैव के लिये सुख की नीन्द सोने की चेष्टा की थी, किन्तु उस समय पाप के भय से और किसी की कल्पनिक मूर्ति आंखो के सन्मुख आजाने से, वह इस चेष्टा में सफल न हो सकी। मानों उस समय उस के स्वामी का हसता हुआ पवित्र चेहरा हिला हिला कर उसे कह रहा था———— "हैं। एसा मत करो। ठहरो तुम्हें क्या कष्ट है। क्या दु.ख. है"? यह कौन जान सकता है। लोक लाज ने उस का मुख बन्द कर दिया था। फिर वह अपनी दु:ख भरी गाथा किस तरह सुनाती। और किस को सुनाती। कोई सुनने वाला ही न था।

ऐसी निर्लज्जता का काम————छी। छी।। वह लोमो को बतलाकर जीवित कैसे रह सकती हे ? और अपना जीवन किस प्रकार भली भान्ति व्यतीत कर सकती है। समाज! अन्धी समाज!! सड़े हुये मांस की भान्ति उसे नोच कर अपने से पृथक कर देती। और जन्ता उसे अपराधी ठहराती। और उसके स्वामी————वह भी सिंह के समान गरज कर उसे अपने घर से बाहर कर देते। फिर क्या होगा ? वह अपना विशेष जीवन किस प्रकार व्यतीत करेगी? होता क्या? वह नष्टता————वह भय कारक दृश्य? जिस का नाम सुनते ही जान ओठों पर आजाती? इतनी आग छाती में गुप्त रहते हुये भी, अतीव सकटो का सामना करते हुये भी, वह अभी जीवित थी। उसे मृत्यु न आसकी। केवल जीवित ही

नहीं———चार मनुष्यो में प्रत्यक्ष रूप में हंसती खेलती भी दृष्टि गोचर होती थी।———इस प्रकार जोवित रहने से———इस प्रकार मृत्यु के चुगल से बचकर जीवन व्यतीत करने से———अन्दर ही अन्दर जल भुन कर अपने बाह्य शरीर को शुद्ध और पवित्र रखने से यद्यपि प्रत्यक्ष रूप में उस की जीवत मनुष्यों में गणनाकी जाती थी, किन्तु वास्तव में पह मुरदा थी।

उसके हृदय में कितना दुःख है। कितनी वेदना है। उसे कौन समझ सकेगा। इस बार जब वह यहां आई। तो क्या वह अपनी इच्छा से आई थी। नहीं! नहीं!! अपने स्वामी के अत्यन्त आग्रह से विवश होकर? इस के अतिरिक्त उसने सोचा था———"क्या अजब इस बार वह भावज के कारण इस कष्ट से मुक्ति प्राप्त कर सके, परन्तु जब उस का भाग्य ही ऐसा बुरा था तो फिर वह गला घोंट कर——— धैर्य्य का भार अपने सिर पर रखकर हृदय के घाव को लोगों से किसी प्रकार गुप्त रखकर घूमने फिरने———रक्त के आंसु बहाकर हंसने बोलने के सिवा वह और क्या कर सकती थी। निर्मल प्रभा ज़ार ज़ार रोने लगी।

ज्योति का दुखी हृदय उस की दर्द भरी गाथा सुन कर इस दुर्भाग्यता के आसुओं से भीगकर पिघल गया। उसने निर्मल प्रभा को अपनी छाती से लगा लिया। उस समय उस की आंखों से आंसुओ की वर्षा हो रही थी।

बहुत समय तक आंसु बहाने के पश्चात, जब उसके हृदय

का भार कुछ हलका हुआ, तो ज्योति ने निर्मल प्रभा को सम्बोधित कर के कहा————"निर्मल ! अब मैं यहां न रहूंगी"।

————"क्यों भावज"।

————"ऐसे वर्ताव पर भी तू मुझे यहां रहने को कहती है"।

————"भावज"?

————"क्यों निर्मल"?

पिछली रात्री को वह फिर मुझे जलाने आये थे। सख्त गरमी के कारण मैं उस ओर आंगन में सोरही थी। बड़े बाबू जी ने जा कर मुझे पुकारा————मैं भय से कंटक के समान होगई। भाग कर तीसरी मंज़ल में चली गई। बड़े बाबू जी ने मेरा वहां तक पीछा किया। मैं ने उनके पाओं पर गिरकर कई बार प्रार्थना की————गड़ गड़ाई———— चापलूसी की, बहुत कुछ कहा सुना और कहा———— "ऐसी चान्द सी बहु मिली है। उन्हो ने कहा————हां यह तो सच है, कौन नहीं जानता? उनका यह उत्तर सुन कर मैं फिर नीचे भाग आई। वह भी मेरे साथ आये। जहां जाती थी, उन्हें भी वहीं पाती थी। मैं सख्त संकट में फंस गई। उन्हों ने सख्त निर्दयता से काम लिया————डराया धमकाया। पुरानी बातें प्रकट कर देंगे? इत्यादि बातें कहीं। हाये भावज ! मैं अबला स्त्री क्या करती। जब अपनी रक्षा का

कोई उपाय न देखा, तुम्हारे कमरे में भाग आई। उस समय तुम भूमि पर पड़ी सो रही थीं। मैने तुम्हें जागने की चेष्टा की, किन्तु निशफल। अन्त विवश होकर रक्षा का कोई उपाय न देख कर मै ने स्वयं को सिंह की मान्द में डाल दिया। मन में आता है कि मै प्रज्वलित अग्नि में कूद पड़ूं। और स्वयं को जीवित ही जलादूं, किन्तु स्वामी की बात सोचकर ———"हाये मेरे प्यारे"———यदि उन को इस बात का पता लग गया। तो उन के लिये दो पल भी जीवित रहना कठिन होजायेगा "न"! "न"!! यह मुझ से न हो सकेगा। प्रज्वलित अग्नि में कूद पड़ने से तो यह पहुत अच्छा होगा कि मैं विष का प्याला पीलूं———उन से उस समय मृत्यु शैय्या पर पड़े सब बातें साफ साफ प्रकट कर दूंगी। परन्तु भावज! अब अधिक कष्ट सहन करने की शक्ति नहीं रही। प्रिय भावज! जो दोचार, दस बीस दिन मुझे यहां व्यतीत करने हैं उतने दिनों तक तो तुम भी किसी न कसी प्रकार यहां रहो ———किसी प्रकार का भय हृदय पर न लाओ ———मै सदैव हर समय तुम्हारे साथ रहूंगी। तुम्हारा कोई भी बाल बाँका नहीं कर सकेगा। यदि हम दोनों परस्पर मिल कर रहें तो एक दूसरे की मान प्रतिष्ठता और सतीत्व की भली भान्ति रक्षा हो सकेगी।

निर्मल प्रभा से ज्योति को जितनी घृणा हो गई थी।

वह उस की अवस्था देखकर कर, उस की दु:ख भरी गाथा उसके मुख से सुनकर, सब आंसुओं की बून्दो में बहकर न मालूम कहां चली गई। सोई हुई सहानुभूति यह दु:ख गाथा सुन कर पुन: जागृत हो उठी। उसने निर्मल प्रभा को सम्बोधित करके कहा——————"चाहे उसे कितने ही कष्टों का सामना क्यो न करना पड़े, परन्तु वह निर्मल प्रभा को वासनाओं की प्रज्वलितअग्नि में नहीं जलने देगी। और उसे अकेली छोड़कर कहीं नहीं जायेगी।
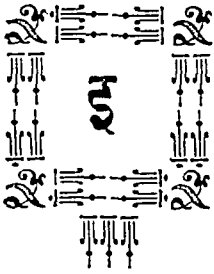
इस के पश्चात् कालचक्कर की कठोर ज़ञ्जीरें ज्योति को तत्काल एक नवीन मार्ग पर खैंच कर ले गईं। अब उसके कष्टो के सिलसिले का आरम्भ हुआ। उसके सुसराल में जो स्त्री घर का काम काज किया करती थी, उसका नाम था बामा काली। बामा काली के देवर का लड़का कलकत्ता के किसी कालिज में पढ़ा करता था। उसे जिमींदारों की ओर से वजीफा मिला करता था। कालिज में दो मास की छुट्टियां हो जाने के कारण गरमी की छुट्टियों में वह गाओं में आया था। उसका नाम था अवनाशचन्द्र।————

जब कभी अवनाश को अवसर मिलता, या उसे किसी

वस्तु की आवश्यकता होती, तो वह ज्योति के पास आकर कहता————"भावज जी !————एक पान दो————पत्र लिखने के लिये कागज़ दो————दो रुपये दो !"————

जेब खर्च का रुपया जिमींदारों के गृहस्थी नियमों के अनुसार घर की बड़ी बहु के पास रहा करता था। जिस किसी को रुपये की आवश्यकता पड़ती, तो वह घर की बड़ी बहु से मांग लिया करता था। और इस तरह अपना काम चलाता था। ज्योति चूंकि चन्द्रकान्त के घर की बड़ी बहु थी, इसी कारण सब रुपया उस के हाथ में रहा करता था। चूंकि ज्योति का अपना खर्च कुछ भी न था, इस कारण उसके पास प्राय: रुपया बच रहता था। इसी से वह घर का काम काज चलाती। जो कुछ शेष बच रहता वह निर्धनों, अनाथों तथा मोहताजों को बांट दिया करती थी।

उस दिन की घटना के पश्चात् जिसका वर्णन हम किसी पिछले प्रकरण में कर आये हैं, ज्योति ने लक्ष्मी कान्त के कमरे में पग तक न रक्खा। वह रात को प्राय: निर्मल प्रभा के साथ कमरे में सोया करती थी। ज्योति को इस प्रकार अपने कमरे में अकेली सोये हुये देखकर, घर की सेवकायें और अन्य स्त्रिया परस्पर काना फूसी किया करती थीं। किसी ने यह पूछने की चेष्टा तक नहीं की, कि ज्योति का इस प्रकार अपने कमरे में अकेला सोने का क्या कारण है ?

परन्तु उन्हें ऐसा करने की आवश्यकता ही क्या थी। उनका चन्द्रकान्त चौधरी से कोई विशेष सम्बन्ध न था। वह स्वयं किसी न किसी सम्बन्ध से उस घर में रहा करती थीं। इसलिये उन्होंने ज्योति के अपने कमरे में सोने का कारण पूछना उचित खयाल न किया।

एक दिन निर्मल प्रभा उस के पास न थी। वह किसी कार्य्यवश बाहर गई हुई थी। उस समय ज्योति पान लगा रही थी। जिस समय ज्योति ने चन्द्रकान्त चौधरी के महल में पग रक्खा था, उसी समय से यह काम उसी को सौंप दिया गया था। अभी वह नहा धो कर और आवश्यक कार्य्यों से निवृत होकर पान लगाने बैठी ही थी——उसके भीगे हुये केश छाती और कन्धे पर लहरा रहे थे। उस समय ज्योति चूने पर कत्था लगा रही थी। इतने में अबनाश ने आकर पुकारा——"भावज जी। क्षमा करना, मुझे तुम से एक बात करनी है।"

ज्योति दीपक की बत्ती की तरह चुप बैठी रही। तनिक भी चचल न हुई।

अबनाश ने कहा——"भावज जी! मैं जब तुम्हारी ओर देखता हूँ, तो तुम मुझ को इन्द्र लोक की ज्योति दृष्टि-गोचर होती हो। इस अभागे घर में रहना मेरे लिये जंजाल है। इस घर में रात दिन इतने पाप होते है और अत्याचार किये जाते हैं जिन का वर्णन करने से शरीर के रोंगटे खड़े

हो जाते हैं। इन पापो और अत्याचारों के कारण मुझे इस घर में चारों ओर अन्धकार ही अन्धकार दृष्टिगोचर हो रहा है। अपने शुद्ध तथा निर्मल चेहरे के प्रज्वलित दीपक से क्या तुम इस घर में पवित्रता और नेक नामी का प्रकाश नहीं कर सकतीं, जिस से यह सर्व अन्धकार लोप हो जाये।

ज्योति ने एक गहरी सांस ली सहानुभुति के इस सूक्ष्म और कोमल विचारो से उस के ज़खमी हृदय में एक हल चल सी मच गई।

अवनाश ने अपनी बात अभी समाप्त नहीं की थी। वह थोड़ी देर चुप रहने के पश्चा त फिर बोला———"क्षमा करना भावज जी! सूर्य देवता को कोई मनुष्य नहीं पासकता, किन्तु फिर भी उसके प्रकाश और सुनहरी किरणों को देख कर प्रत्येक मनुष्य यह अनुमान लगा सकता है कि सूर्य देवता प्रकाश का एक चमकीला टुकड़ा है। भावज जी! तुम्हें देख कर यह बात मेरी बुद्धि में भली भान्ति अंकित हो चुकी है कि इसघर में तुम ही एक अपूर्व व्यक्ति हो, जो इस घर को अवस्था ठीक कर सकती हो। परन्तु क्या तुम मुझे यह बतला सकती हो कि तुम्हारी उपस्थिती में इस घर की अवस्था अब तक क्यो परिवर्तित नहीं हुई।"

अवनाश के शब्दों ने ज्योति के हृदय पर एक गहरा प्रभाव डाला। वह स्वयं को संभाल न सकी। उसकी आंखो में आंसु भर आये। इस खयाल से कि शायद अवनाश उसदिन

की घटना से भली भान्ति परिचित हो————केवल इस भय से उसने अपने सिर को और भी नीचा कर लिया।

अवनाश ने एक छोटी सी सांस लेकर कहा————"ज्ञात होता है कि तुम्हें यहां कुच्छ कष्ट है। इस बात को मैं कई दिनो से जानता हू। किन्तु इस प्रकार चुपचाप धीय्य धारण किये बैठे रहने से तो काम नहीं चलेगा। भावज जी! इस घर में जो कुच्छ भी हो तुम्हीं हो। तुम ही इस घर को बनाने और तुम ही इस घर को बिगाड़ने वाली हो। तुम ही इस घर को स्वर्ग बना सकती हो और तुम ही इस घर को नरक।————यदि तुम ने तनिक भी कठोर शब्दों से काम लिया, तो मेरी यह बात याद रक्खो कि दम के दम में सब ठीक हो जायेगा। क्षमा करना! मैं तुम्हारे स्वामी की निन्दा नहीं करता————क्या उन में मनुष्यता है? वह तो पशु के समान हैं। बहु बन कर पहिले पहिल जिस दिन तुम ने इस घर में पग रक्खा। मै ने उसी दिन तुम्हारे पाओं देखकर इस बात का अनुमान लगा लिया था कि तुम्हारे इस घर में पग रखते ही इस घर की कीच में भी कमल-फूल खिलेगा। मै ने तो यही सोचा था। परन्तु इस बार जब मैं यहां आया, तो इस की अवस्था देखकर और यहां के हालात सुन कर मेरे तन बदन में आग लग गई मैं ने सोचा क्या था और हुआ क्या?"

अवनाश के मुख से इन शब्दो का निकलना था, कि ज्योति

की आंखो से आंसू वहने लगे । उन में से कुच्छ आंसूओं की बून्दे पान के डब्बे पर गिरीं।

अवनाश ने ज्योति को इस तरह रोते हुये देख कर पुनः कहना आरम्भ किया।————"भावजजी ! यहां सीधेपन और नरमी से काम नही चलेगा। तुम्हे अब कठोर शब्दो से काम लेना पड़ेगा। तुम ने इस घर के मालिक से लेकर तुच्छ सेवक तक सबको देख लिया । यदि इनके साथ सख्ती से पेश आया जाये, तो यह काम करते हैं । नहीं तो जिसे देखो पाटेखां बना फिरता है। सब स्वय को उच्च समझते है । दूसरो की जान को वह कुच्छ भी नहीं समझते । जिसे आंखें न दिखाओ वह सीधे मुख बात भी नहीं करता। यदि तुम ने भविष्य में कठोरता से काम न लिया, तो याद रक्खो अपना सब कुच्छ खो बैठोगी।————यहां तक ही नहीं बल्कि इस घर से बाहर निकाल दी जाओगी। तुम इस घर की बड़ी बहु हो ! तुम ही इस घर की मालकिन हो । इस लिये तुम्हे अपने कर्त्तव्य पर ध्यान देना चाहिये! यदि तुम यह अत्याचार नरमी से सहन करती रहीं, तो याद रक्खो ! यह बात अपनी बुद्धि में अकित करलो कि इन सब पापों का भार तुम्हारी गरदन पर होगा ? जानती हो अपने कर्त्तव्य का पालन करना स्वयं को पापो में घसीटना है ।"

ज्योति अवनाश चन्द्र को बातो का क्या उत्तर देती। उस की आंखो पर तो आंसुओ के बहने से एक प्रकार का पर्दा

पड़ गया था। उसने अपने आंचल से अपने आंखें पूंछ डालीं।

अवनाश अब ज्योति के बिल्कुल समीप आ गया! उसने चारो ओर देखा। जब उसको वहां कोई मनुष्य दिखाई न दिया, तब उसने धीरे धीरे प्रेम से ज्योति का सिर अपनी जांघों पर रख लिया।

ज्योति के चेहरे से घुघट सरक गया। आंसुओं के बहने से उसका सुन्दर चेहरा कुछ फीका पड़गया था।

अवनाश ने फिर कहना आरम्भ किया।————"भावज जी। इसतरह आंसु बहाने से क्या लाभ? जब तक मैं इस घर मे उपस्थित हुं। तुम्हें किसी प्रकार का कष्ट नहीं हो सकता? और न किसी को तुम्हें कष्ट देने का साहस ही हो सकता है। तुम मुझे अपना सहायक और शुभचिन्तक समझो। परन्तु हां तुम्हें केवल इतना काम अवश्य करना पड़ेगा कि अब तुम भविष्य में कठोरता से काम लिया करो। तुम्हारा यह सुनहरी राज्य————तुम्हारी प्रभुत्व ————इस पर अन्य अपना अधिकार जमाये और आनन्द उड़ाये? तुम इसको धीर्य्य और शान्ति से सहन कर सकती हो तो करो, किन्तु मुझ से तुम्हारी यह हक तल्फी नहीं देखी जा सकती————भावज जी! तनिक मेरी ओर ही देखो! मेरा इस घर से क्या सम्बन्ध है? कुछ भी नहीं। परन्तु मैं प्राया होकर कठोरता से काम लेकर इस

घर में इस तरह का सुख उठा रहा हूं। परन्तु तुम तो इस घर की मालकिन हो। क्या तुम से यह भी नहीं हो सकता ? मैं पहिले पहिल जब यहां आया, तो मैं भी स्वयं को एक जिम्मेदार माना करता था। और तम्हारी तरह प्रत्येक मनुष्य की दुत्कार फटकार धैर्य्य और शान्ति से सुना करता था। और प्रत्येक से दबकर रहा करता था, किन्तु जब मुझे वास्तविक अवस्था से परिचय प्राप्त हो गया, और जब मुझे इस बात का ज्ञान होगया, कि यहां प्रत्येक से दब कर रहने से काम नहीं चलेगा, तो मैं निर्भय हो गया, और मैंने प्रत्येक से कठोरता से काम लेना आरम्भ कर दिया। किसी न किसी तरह रुपय का प्रबन्ध करके मैं कलकत्ता जा पहुंचा। और वहां मैं ने शिक्षा प्राप्त करना आरम्भ कर दिया। अब मैं पहिले की उपेक्षा बहुत निश्चिन्तता से अपने दिन व्यतीत कर रहा हु। यदि मुझे यहां की अवस्था से परिचय प्राप्त न होगया होता और मैं भी तुम्हारी तरह प्रत्येक से दबकर रहता, तो मेरी यह अवस्था न होती, जो मेरी इस समय है। इस लिये मैं तुम से यह कहना उचित खयाल करता हू कि अब यहां पर्दे में रहने से काम न चलेगा। और न यहां दबकर रहने से तुम अपने दिन सुख से व्यतीत कर सकोगी। अतः अब तुमको उचित है कि तुम अब हर किसी से पर्दा करना छोड़ दो। और आग की चिंगाड़ी के समान इस प्रकार भड़क उठो कि सब तुम से भय खाने लग जायें। यदि तुमने

ऐसा करना आरम्भ कर दिया, तो फिर देखना कि क्या यही घर जो इन दिनों नरक का नमूना बना हुआ है स्वर्ग बनता है या नहीं।"

ज्योति के लिये अब चुप बैठना कठिन होगया। अवनाश की इन बातों ने उस के हृदय पर एक गहरा प्रभाव डाला। उस की आंखें खोल दीं। और वह पाप और पुन्य से भली प्रकार परिचित हो गई। आज उसने इस पाप-स्थान में एक सहृदय देवता देखा। अन्धकार मय और भयकारक जंगल में उसे एक प्रकाश दिखाई दिया उसने कहा——————"परन्तु देवर जी! मैं तो एक निर्धन कुल की कन्या हुं।"

——————"लेकिन तुम किसी के यहां भीख मांगने थोड़ी गई थीं। यह लोग ही तो जाकर तुम्हें अपने यहां ले आये हैं।"

——————"देवर जी! क्या मुझ में इतनी शक्ति है।"

——————"हां क्यों नहीं? तुम में असीम शक्ति है।" परन्तु रोना तो इस बात का है कि तुम इस से अपरिचित हो। अब इतना काम करो कि भविष्य में कठोरता से काम लो। लाल पीली आंखें निकालो फिर देखना कि चारो ओर लोग तुम्हारा ही सन्मान करते हैं या नहीं। तुम्हारी आज्ञा उलंघन करने का किसी को साहस तक न होगा?

पान लगाने का काम समाप्त हो चुका था। ज्योति ने कहा——————"बहुत अच्छा देवर जी! मैं तुम्हारी इन

बातों पर विचार करूंगी। मैंने तो सब ओर से आंखें मून्द्ली थीं————आंखें रखते हुये भी अन्धी बन चुकी थी। मैं ने तो यहां से चले जाने का दृढ़ संकल्प कर लिया था। परन्तु मैं एक बिपन अबला स्त्री से प्रण कर चुकी हुं। इस लिये ऐसा करने से वञ्चित रही। अब मैं तुम्हारी आज्ञा पालन करूगी परन्तु देवर जी? क्या तुम इस कार्य में मुझ अबला की सहायता न करोगे?"

लक्षमी कान्त ने उस समय ज्योति को घर से निकालने के लिये लाल-पीली आंखें निकाली तो थीं। परन्तु फिर ऐसा करने का उस को साहस न हुआ। यह क्यो? लक्षमी कान्त यह बात भली भान्ति जानता था कि वह ज्योति को किसी प्रकार घर से नहीं निकाल सकेगा। यदि उसने ज्योति को घर से निकाल दिया, तो उस में उसका सख्त अपमान होगा। एक निर्धन ब्रह्मण की कन्या से विवाह करके, उस को इस प्रकार अपमानित करके घर से निकाल देने से लोग उसे बुरा-भला कहेंगे। इस ख्याल से वह ज्योति को घर से निकाने का साहस न कर सका। उस के ऐसा करने से उस की

मान-प्रतिष्टा में अन्तर आने की सम्भावना थी । वह ऐसा काम करके अपने पिता———दादा के नाम पर कलंक नहीं लगाना चाहता था । ज्योति अति निर्भय हो गई है । कहीं वह इन सब बातो से उस के पिता चन्द्रकान्त चौधरी को परिचित न करदे, इस खयाल से भी उसे ज्योति को घर से निकालने का सहस न पड़ता था । और इसी भय से वह मन ही मन में क्रोध खाकर रह गया । उसने अपने मन में इस बात की प्रतिज्ञा करली कि वह अब ऐसी मुंह फट, निर्लज्ज स्त्री का कभी भी मुख नहीं देखेगा । अन्त ज्योति उक्ता कर स्वयं उस के पास चली आयेगी । किन्तु उसे क्या मालूम कि इन तिलों में तेल कहां ?

यदि उस कमरे में मैं सोया न करूं, तो ज्योति को उस के कमरे में अकेले सोना दो भर हो जायेगा और वह घबरा कर स्वय उस के पास चली आयेगी । इस खयाल से लक्ष्मी कान्त ने अपने कमरे में सोना ही बन्द कर दिया । जिस कमरे में ज्योति सोया करती थी, लक्ष्मी कान्त भूल कर भी उस में पग नहीं धरता था और न उसे उस का कुशलक्षेम पूछने का अवकाश ही मिलता था ! दूसरो की हा हा ! हु हु !! और वाह वाह में उसे इतना आनन्द मिलता था कि उसे ज्योति से मिलने का समय ही नहीं मिलता था । परन्तु अन्त उसे ज्योति की देख भाल करने की आवश्यकता अनुभव हुई । अचनाग कभी कभी आंधी के समान आ कर राग रंग, तान,

तरंग में अपना रंग जमा देता था । उस की इन बातों से नादान लक्ष्मी कान्त के हृदय में कई तरह के संदेह उत्पन्न हो जाते थे । यही कारण था कि अब लक्ष्मी कान्त अबनाश चन्द्र से भय खाने लगा । और उस की बातों का उत्तर देना उस के लिये कठिन हो गया । लक्ष्मी कान्त अबनाश चन्द्र से मिलना भी पसन्द नहीं करता था, किन्तु ऐसा करना उस की शक्ति से बाहर था । अबनाश बामा काली के देवर का पुत्र था———किसी को उसे कुच्छ कहने सुनने का साहस नहीं हो सकता था । केवल हंस कर टाल देने के सिवा उस की बातों का किसी के पास कोई उत्तर न था ।

एक दिन लक्ष्मी कान्त को एकान्त मे पाकर अबनाश ने लक्ष्मी कान्त से इस प्रकार कहना आरम्भ किया ——— "बड़ेदादा ! क्षमा करना, में आपका अमूल्य समय नष्ट करने लगा हूँ । मुझे आप से एक अति आवश्यक बात पूछनी है । क्या आप मेरी बात का सन्तोष जनक उत्तर देकर मुझे कृतार्थ न करेंगे ?"

———"क्या बात है ?" इतना कहते हुए लक्ष्मी कान्त का समस्त शरीर थर थर कांपने लगा । अबनाश की बातें असाधारण हुआ करती थीं । उनमें जादू भरा हुआ होता था । उसकी बातों का उत्तर देना कोई सरल काम न था । यही कारण था कि लक्ष्मी कान्त भय से थर थर कांपने लगा ।

अवनाश ने कहा——————"रात्री को तुम कहां सोते हो।"

——————"क्यों बाह्य कमरे में।"

——————"एकाकिनी अपना कमरा छोड़ कर बाह्य कमरे में क्यों?"

——————"इन दिनों सख्त गरमी पड़ती है।

——————"नहीं दादा! यह बात नहीं है। जब से मैं कलकत्ता से आया हूं। तब से मैं लगातार देख रहा हूं कि तुम भावज जी के कमरे में भूल कर भी पग नहीं धरते। क्या बात है? क्या मैं जान सकता हूं।"

——————"तुम्हें इन बातों से क्या सम्बन्ध?"

——————"मैं जो कहता हूं केवल सहानुभूति के कारण और कुल की मान-प्रतिष्ठा की रक्षा के विचार से ऐसा कहता हूं। यदि मुझे आप से सहानुभूति न-हो, तो मुझे इन बातों के कहने की क्या आवश्यकता है? लोगो को जब इन बातों का पता लगेगा तो वह क्या कहेंगे?"

——————"क्या संसार में लोगों को इस काम के सिवा और कोई काम नहीं?"

——————"हां।"

इसके पश्चात् अवनाश ने चुप साध ली। और वह चुपचाप कुरसी पर बैठ गया। उस समय लक्ष्मी कान्त ने गहरी सांस ली। मानों उसकी जान में जान आई। कहीं अवनाश फिर कोई बात न छेड़ दे, इस भय से वह यहां से

जाने की तैय्यारियां करने लगा। परन्तु अवनाश उसे बुरी तरह लिपट गया था————उसे छोड़ देने का नाम तक न लेता था। उसने फिर कहना आरम्भ किया————
"बड़े दादा!"

लक्ष्मी कान्त चौंक उठा————क्यों? क्या कहता है?"

————"यदि तुम को उसके कुशल-क्षेम भी पूछने का अवकाश नहीं मिलता, तो फिर तुम्हें विवाह करके पराये घर की कन्या को अपने यहां लाने की क्या आवश्यकता थी?' क्या उसे अपने माता—पिता के घर में दो रोटियां भी खाने को नहीं मिलती थीं।"

————"अबनाश! तु नहीं जानता, वह बड़ी चुड़ैल है।"

————"चुड़ैल! ————वह चुड़ैल कैसे हुई? क्या मैं सुन सकता हूँ।"

लक्ष्मी कान्त ने कहा————"यह एक लम्बी गाथा है। चाहे कुछ भी क्यों न हो? परन्तु यह एक निश्चित बात है कि मेरी उस के साथ नहीं निभेगी?"

"इस का कारण? क्या आपने उस के साथ निभाने की चेष्टा भी की?"

लक्ष्मी कान्त अबनाश की यह बात सहन न कर सका वह मन ही मन में कहने लगा—— ——"मेरी कृपा दृष्टि का

अभिलाषी————मेरे ही दिये हुये रोटी के टुकड़ों से पला हुआ, यह लड़का ! क्यों मेरे पीछे पड़गया है ? इसे मुझसे ऐसी बातें करने और मुझ से इस प्रकार के प्रश्नों की बोछाड़ करने की आवश्यकता क्यो पड़ी ? दिन प्रतिदिन उस का स्वभाव बिगडता जा रहा है ! उसे अबनाश की इन बातों से क्रोध आगया। वह खफ़ा होकर बोला————"मैं तेरे सन्मुख खड़े हो कर तेरे प्रत्येक प्रश्न का उत्तर नहीं देना चाहता ? यह मेरी इच्छा है कि मैं उस से सम्बन्ध रक्खूं या न रक्खूं, किन्तु तू पूछने वाला कौन हैं ? रात दिन तू जो इस तरह उस से काना फूसी किया करता है, इस का क्या कारण है ? तुम्हारी कोई बात भी मेरी समझ में नहीं आती । जा मेरे सामने से दूर हो जा ।"

अबनाश ने कहा————"बड़ेदादा ।"————

————"बड़ेदादा और छोटे दादा क्या ? मैं अब कुछ भी नहीं सुनना चाहता ? मेरे गृहस्थी विषयों में दखल देने वाला तू कौन ?"

————"(क्रोध खाकर) "बड़ेदादा ! तनिक मुख संभाल कर बात कीजियेगा। जो आप की जिह्वा पर आये वह आप मुझे कहिये। मैं उस को प्रसन्नता पूर्वक सहन करलूगा। किसी तरह का रंज हृदय पर न लाऊंगा। क्योंकि मैं आपका नमक खाता हूँ। किन्तु सावधान ! भावज जी के प्रति इस तरह के बुरे शब्द अपने मुख से न निकालियेगा । और आप सब को अपने समान न समझियेगा । पांचों उंगलियां एक

समान नहीं होतीं ?"

क्रोध से लक्ष्मी कान्त की आंखो से चिंगाड़ियां निकलने लगीं। वह न जाने क्या कहना चाहता था, परन्तु अबनाश ने लक्ष्मी कान्त को उत्तर का अवसर न देकर कहना शुरु किया—
———"मैं सब हालात से भली भान्ति परिचित हूँ। कोई बात मुझ से छुपी हुई नहीं। मेरे सामने लाल-पीली आंखें न निकालियेगा। यदि आप ऐसा करेंगे, तो याद रखो कि मैं तुम्हारी करतूतो का भांडा फोड़ दूंगा। और निर्मल प्रभा के पति को बुला कर उसे सब हालात से परिचित कर दूंगा।"

अबनाश चन्द्र की उपरोक्त बातें सुनकर लक्ष्मी कान्त के हृदय पर भय तारी हो गया। वह मन ही मन में कहने लगा————"निर्मल प्रभा की बात उसे कैसे मालूम हो गई। हो न हो ज्योति ने ही इस से उस बात की चर्चा की हो? वह बड़ी चुड़ैल है। किन्तु लक्ष्मी कान्त का यह खयाल मिथ्या था। ज्योति इस विषय में बिल्कुल निर्प्राध थी। उस रात को, जो पाप लीला उसने आंखो से देखी थी, उसने उसका विधानअबनाश तो क्या, कभी निर्मल प्रभा से भी नहीं किया था। और उसने निर्मल प्रभा से कहने का आवश्यकता ही नहीं समझी। फिर भला वह अवनाश से इस बात की क्यों कर चर्चा कर सकती थी?

ज्योति यह सब बातें जानती थी। और वह इस बात से भी भलीभान्ति परिचित थी, कि निर्मल प्रभा को बलात्कार इस प्राप अग्नि में धकेला गया है। और कि वह इस विषय मे

बिल्कुल निर्प्राध है। यही कारण था कि वह निर्मल प्रभा को इन हालात से परिचित करके, उसे और विपत्ति में नहीं डालना चाहती थी।

अबनाश को स्वयं ही निर्मल प्रभा की बात मालूम थी। दोचार बार वह जब कभी कलकत्ता से यहां आया था, तो उस ने अपनी आंखों के सामने यह कुकर्म होते देख कर भी देखा-अन देखी कर दी थी। उस समय उसने लक्ष्मी कान्त के हाथों निर्मल प्रभा के सतीत्व की रक्षा करने की चेष्टा भी की थी। परन्तु व्यर्थ! उसने निर्मल प्रभा के पति को एक प्राईवेट पत्र भी लिखा था, जिस में उसने लिखा था कि निर्मल प्रभा रोग में ग्रस्त हैं। जब से वह आपसे जुदा हो कर यहां आई है, हर समय व्याकुल रहती है। उस की इस अवस्था से ऐसा प्रतीत होता है कि यहां उस का मन नहीं लगा। वह आप के पास आना चाहती है। कृप्या स्वयं पधारें और उसे आकर ले जायें। इस के अतिरिक्त उस के पति को अबनाश ने यह भी लिख दिया था कि इस पत्र को यदि आप गुप्त रक्खे तो बहुत अच्छा होगा। नहीं तो यदि उस को इन बातों की खबर हो जायेगी, तो सम्भव है वह अपनी जान पर खेल जाये। उसका इस प्रकार जान पर खेल जाना आप के भी अपमान का कारण होगा।

अन्त निर्मल प्रभा का पति उस को लेने के लिये आ ही गया। यद्यपि निर्मल प्रभा को यह बात किसी तरह मालूम न हुई कि उस का पति उसको क्यों लेने आया है, तथापि उस के आगमन का समाचार सुनकर उसकी जान में जान आगई

और वह अपने पति के साथ चली गई।

निर्मल प्रभा जब कभी कोई बात अवनाश से कहती तो अवनाश चुपके से रहस्यमयी दृष्टि उस के चेहरे पर डालता था। अवनाश की यह हार्दिक अभिलाषा थी कि निर्मल प्रभा पर लक्ष्मी कान्त की छाया भी न पड़े। उस ने इस विषय में निर्मल प्रभा को निर्पराध पाया था। जिस रात्री को यह कुकर्म प्रयोग में आया था, उस रात अवनाश ने सामने आकर कहा था————"बड़े दादा! इतनी रात व्यतीत होगई? परन्तु अभी तक तुम नहीं सोये। इधर उधर फिर रहे हो क्या कारण है?"

लक्ष्मी कान्त ने क्रोध में आकर उत्तर दिया था———— "सख्त गरमी है। नीन्द नहीं आती। यही कारण है कि इधर उधर टहल कर समय व्यतीत कर रहा हूं। पवन का कहीं नामो निशान तक नहीं। एक पत्ता तक भी नहीं हिलता।"

"उफ! इतनी गरमी!" यह कह कर वह बाहर कमरे में चला गया था।

अब जबकि अवनाश ने निर्मल प्रभा की बात छेड़ी। तो लक्ष्मी कान्त के हृदय पर भय तारी हो गया और वह इसी भय के कारण, कि कहीं अवनाश मेरी सब करतूतों का भान्डा न फोड़ दे, धीरे धीरे चोरों के समान दबे पाओं कमरे से बाहर हो गया।

अवनाश द्वार के पास चुप खड़ा रहा। लक्ष्मी कान्त के इस तरह चले जाने के पश्चात उस ने एक गहरी सांस ली और सैर करने के अभिप्राय से नदी की ओर चल दिया।

(२०)

उस दिन अधिक रात बीते अवनाश घर को लौटा, तो उसका समस्त शरीर टूट रहा था सिर में सख्त दर्द था। इस लिये वह खाना भी न खा सका और चुप चाप बिस्तर पर जाकर लेट गया।

इन कई दिनो के परिचय और बात चीत से ज्योति को अवनाश पर कुछ श्रद्धा सी हो गई थी। इतने विस्तृत आली-शान पत्थर के महल में अब तक जितने मनुष्य ज्योति की दृष्टि में से गुज़रे थे, उन सब का हृदय ज्योति ने पत्थर से भी अधिक कठोर अनुभव किया था। ——————"पत्थर हृदय से स्नेह बढ़ाना और उस से मेल जोल रखना, पत्थर

से सिर फोड़ने के समान है । केवल अवनाश ही एक ऐसा मनुष्य था जिस के हृदथ में दूसरों के लिये दर्द और दया थी ।————प्रेम और अनुकंप————सहानुभुति थी ————वह यहां किस लिये आता है ? चाची से उसका क्या सम्बन्ध है यह बातें थी, जो उस के हृदय में चुटकियां लिया करती थी । ज्योति के हृदय में ? अबनाश ने स्थान प्राप्त कर लिया था । ज्योति को अबनाश से स्नेह हो गया । वह अबनाश के खाने-पीने, रहन-सहन, सुख दुःख की ओर ध्यान देने लगी ।

इन दो तीन उपायों के सिवा और कौन सा उपाय है जिन को प्रयोग में लाकर स्त्रि अपना स्नेह प्रकट कर सकती है ।

अबनाश भी ज्योति को अनुराग की दृष्टि से देखता था । भोजन करते समय जब वह अपने सन्मुख रक्खे हुये थाल की ओर दृष्टि दौड़ाता, तो उस को थाल में रक्खी हुई सब खाने की बस्तुयें साफ सुथरी और बढ़िया दिखाई देती थी जिधर दृष्टि जाती थी, स्नेह की झलक दृष्टि गोचर होती थी ।

संसार में 'सिवाये प्रेम और स्नेह के और वस्तु ही क्या है ?

उस रात अबनाश ने खाना नहीं खाया । ज्योति रसोई घर में बैठी उस की बाट जोह रही थी । वह क्यो नहीं आया । कहां गया । यह प्रश्न थे जो उसे बेचैन करने लगे । इस विषय में इसने किसी से प्रश्न तक न किया । उसका कारण भी था

घर की अवस्था से परिचित होकर, ज्योति के लिये यह पूछना कुएँ में पाओ लटकाकर मृत्यु को स्वयं बुलाने के समान था। यदि वह ईश्वर न करे किसी से अवनाश के विषय में कुछ पूछ भी लेती, तो उसे सैकड़ो बातें सुननी पड़तीं। घर की सेवकायें अलग मूंह तोड़तीं। वामा काली के सिवा सब यही कहने लगतीं कि ज्योति अवनाश पर मग्न हो गई है। यदि वह अवनाश को स्नेह की दृष्टि से नहीं देखती, तो फिर उस के खाने पीने की इतनी चिन्ता क्यो ? अपने पति को त्याग कर अवनाश की आव भगत करना कैसा ?

यही सोंच कर वह चुप बैठी रही। जब सब लोग खा पीकर सोने के लिये अपने अपने कमरे में चलेगये, तो उन लोगो के चले जाने के थोड़ी देर पश्चात, ज्योति भी सोने के लिये अपने कमरे में चली गई। लक्ष्मी कान्त को अपने कमरे में उपस्थित न देख कर, यह निर्मल प्रभा की खोज में चली। जाकर देखा कि निर्मल प्रभा अपने कमरे में खाट पर लेट रही है। ज्योति ने पुकारा———"निर्मल !"

निर्मल प्रभा ने कोई उत्तर नहीं दिया। वह अचेत—बेसुध पड़ी सो रही थी। निर्मल प्रभा को इस तरह स्वप्न में लीन देखकर ज्योति ने अवनाश के कमरे का रुख किया। अवनाश के कमरे में उस समय खासा अन्धकार था। इधर एक ओर खिड़की खुली हुई थी। चान्द की शुद्ध और निर्मल ज्योत्स्ना उसमें से प्रवेश करके अवनाश

की खाट पर पड़ रही थी। ज्योति ने आकर पुकारा———
"देवर जी!"

ज्योति की आवाज़ सुन कर अबनाश की आंख खुल गई। बोला————"कौन? भावज जी!

————"हां!"

————"क्यों भावज! इतनी रात बीते तुम कहां? कुशल तो है?"

————"सब कुशल है। आज रात तुम भोजन करने क्यों नहीं आये?"

————"भावज! क्या कहुं आज मेरी तबीयत कुछ नासाज़ थी। सिर में सख्त दर्द है!"

यह कह कर अबनाश ने दोनों हाथों से अपना सिर थाम लिया। वह खाट से उठ कर बैठ गया। ज्योति समीप आकर अबनाश के सिर पर हाथ फेरने लगी————"उफ! इतना गरम! ————जोर जोर से धमक हो रही है। इसके पश्चात ज्योति ने शरीर पर हाथ फेर कर देखा————
"यह भी तो अग्नि की भान्ति जल रहा है।"

ज्योति ने कहा———"तुम्हें तो सरदी लग गई है।

————"हां कुछ सरदी अनुभव हो रही है।"

ज्योति ने मुसिकरा कर कहा————"क्या कहते हो? सरदी लग रही है। देवर जी! तुम्हें तो बहुत ज़ोर का बुखार है। तुम खाट पर लेट रहो। मैं यू-डी कलीन ले आऊँ।"

————"भावज! तुम्हें मेरे लिये कष्ट उठाने को

आवश्यकता नहीं। जब नींद आजायेगी, तो सब ठीक हो जायेगा। सिर का दर्द भी जाता रहेगा। मेरे लिये इतनी चिन्ता न करो। तुम अब जाकर सो रहो!"

————"नहीं तुम लेट रहो मैं अभी आती हूं।"

————"भावज! मेरा शरीर लोहे का है, मोम का नहीं। जो इतनी जल्दी पिघल जायेगा!"

ज्योति को अवनाश की यह बातें सुन सख्त दुःख हुआ। अवनाश ने उसको सम्बोधित करके यह बातें क्यों कही हैं। उसको उसने मन ही मन में भली भान्ति अनुभव किया। उसने अब वहां अधिक देर ठहरना उचित खयाल न किया। वह सीधी अपने कमरे में गई। लक्ष्मी कान्त अभी तक नहीं आया था। ज्योति ने अपने मस्तक पर बल डाल कर अपना बक्स खोला और शीशी निकाल कर बाहर आंगन में आई। सीढ़ियों पर किसी के जूतो की चाप सुनाई दी———लक्ष्मी कान्त ऊपर आ रहा था।

अवनाश के कमरे में अंगीठी पर एक कांच का प्याला रक्खा था। ज्योति ने उसी में यू-डी-कलीन भगो कर उसके सिर पर रक्खी। उस वक्त अवनाश को अपने तन बदन की भी सुध न थी।

यू-डी-कलीन सिर पर रख कर, ज्योति उसे पंखा करने लगी। अवनाश को सख्त बुखार के कारण कुछ सुध न थी। ज्यों ज्यो रात व्यतीत होती जाती थी। त्यो त्यो ज्योति की

दया भरी आंखें नींद के मारे झुकी जा रही थीं। दोनों हाथों में दर्द हो रहा था। इस पर भी उसने पंखा न छोड़ा।

अब अवनाश का ज्वर धीरे धीरे हलका होने लगा। उसने आंखें मल कर देखा, ज्योति नीन्द में चूर है। उस की अध खिली आंखें नीन्द के मारे झुकी जारही थी। परन्तु फिर भी उस ने पंखा न छोड़ा। वह किसी न किसी तरह अवनाश को पंखा करती ही रही। कमल-फूल के सदृश ज्योति का फूल सा चेहरा मुरझा गया। अवनाश ने उस के चेहरे की ओर ध्यान से देखा। गलानि और अनुकंपा से उस का हृदय भर आया। जैसे तैसे सांस रोक कर उस ने पुकारा———
"भावज जी!"

ज्योति ने लज्जा अनुभव करते हुये कहा————"क्षमा करना, तनिक आंख झपक गई थी।"

————"आंख झपक गई तो क्या हुआ। भावज जी! तुम ने तो रात भर जागृत रहकर मेरी सुश्रुषा की है।"

————"फिर क्या हुआ?"

————"परन्तु भावज जी! तुम्हें इतना कष्ट उठाने की आवश्यकता नहीं।"

————"इन व्यर्थ की बातो को जाने दो। अब यह बताओ कि ज्वर कुछ हलका हुआ————सिर में दर्द तो नही।

————"तुम ने मेरे शरीर पर हाथ फेर कर सब रोग दूर कर दिया। क्या मैं अब जाकर सरोवर में

स्नान कर आऊ । मुझे विशवास है कि सरोवर में स्नान करने से फिर यह ज्वर जाता रहेगा ।"

———"नहीं देवर जी! यह न होगा ! मैं तुम्हें सरोवर मैं स्नान करने न जाने दूंगी । और न रोटी ही खाने दूंगी ।"

———"तो क्या मुझे सागूदाना खाने को दोगी। भावज जी ! राम राम करो । मैं ने इस जीवन में आज तक किसी दिन भी सागू दाना नहीं खाया । मेरे लिये व्यर्थ यह कष्ट न उठाओ ।"

——— 'कोई कष्ट नहीं । तुम उठो, मुंह हाथ धोलो और थोड़ा सा सागूदाना खालो । तुम तो कहते हो कि ज्वर उतर गया है । परन्तु तुम्हारा चेहरा तो अभ तक भी ऐसा ही है ।"

———"वाह इस से क्या ? मृत्यु के पश्चात भी मनुष्य के शरीर के अन्दर जो गरमी होती है वह बिल्कुल नष्ट नहीं होती । उसी तरह शरीर के अन्दर मोजूद रहती है ।

———"अच्छा ! तुम उठो तो सही ।

(२१)

उस सायं काल अवनाश को पुनः ज्वर ने आ घेरा। ज्योति रसोई घर में सागूदाना बनाने गई, दिन को उसने अवनाश की सुश्रूषा का भार निर्मल प्रभा पर छोड़ा। दिन में निर्मल प्रभा को अवनाश की चारपाई पर ही बैठ रहने की ताकीद करके वह अपने गृहस्थी काम धन्धो में लिप्त हो जाती। और आवश्यक कार्यों से निवृत होकर, वह फिर अवनाश के कमरे में चली आती थी।

ज्योति यह देखकर कि घर के किसी एक मनुष्य को अवनाश की बीमारी की कुछ भी खबर नहीं, विस्मय हो, गई। घर के जितने आदमी थे सब पहिले की भान्ति अपने अपने

कामो में लिप्त थे। केवल यही एक स्त्री थी, जो बगोले की तरह इधर उधर दौड़ती दिखाई देती थी। वह घर से बाहर क्यो नहीं निकली। घर में है या कहीं बाहर गई हुई है। यह बाते पूछने की किसी को इच्छा तक न हुई। और न ज्योति की किसी को चिन्ता ही थी। दूसरो को तो जाने दीजिये, चाची जी को भी इस बात का खयाल तक न आया कि अबनाश का क्या हाल है। उसने कल रात भोजन क्यों नहीं किया! आश्चर्य है यह पूछना उन्हो ने क्यो उचित नहीं समझा। यह बातें थीं जो ज्योति को रह रह कर सताया करती थीं।

सायं काल के पश्चात अबनाश को फिर बुखार चढ़ गया।————१०२ डिगरी! दोनों आंखे रक्त के समान लाल—गरम लोहे की भान्ति लाल चेहरा टमटमा रहा था। अबनाश की यह दशा देखकर ज्योति डर गई।———— इस समय तो किसी डाक्टर को बुलाना चाहिए। किन्तु वह डाक्टर बुलाने के लिये कहे तो किस को? अन्त उसने निर्मल प्रभा को इस काम के लिये चुना। निर्मल प्रभा ने उत्तर में कहा————"भावज जी! यदि तुम मुझ से कहने की बजाये बड़े बाबू जी से कहतीं, तो अच्छा होता? हस्पताल से घर जाते समय डाक्टर साहिब उन्हें देख जाते।

——— —"क्यों? तू जा! सुसर जी से कह। बुआ जी

से कह"।

सेवका को इस घर के बच्चे बूढ़े सब बुआ जी कहकर पुकारते थे।

निर्मल प्रभा ने कहा———"इस घर की लीला न्यारी है। तुम नहीं जानतीं डाक्टर साहिब इस घर में मास में एक बार आया करते हैं। यदि कोई रोगी हुआ तो औषधि देदी। नहीं तो खैर। इसके अतिरिक्त यहां के सब सेवक काम चोर हैं। यदि कोई मेरे कहने पर डाक्टर साहिब को बुलाने चला भी गया, तो वह थोड़ी देर के पश्चात इधर उधर घूम फिर कर आ जायेगा और आकर कह देगा कि डाक्टर साहिब आते हैं। यदि बड़े बाबु ज्वर में ग्रस्त हो जाते, तो अलग बात थी'। परन्तु अबनाश की बात कौन पूछे।"

———"बेचारा अबनाश!"———ज्योति इतना ही कह कर चुप हो गई। और निर्मल प्रभा के चेहरे की ओर ध्यान से देखने लगी। निर्मल प्रभा ने कहा—— ——"डाक्टर साहिब विचित्र मनुष्य हैं घरके लोगों में से सिवाय बड़े बाबू जी के यदि ईश्वर न करे कोई ज्वर में हो ग्रस्त भी जाये, तो उन्हें आने का अवकाश ही नहीं मिलता। इसी लिये तो कहती हूँ कि तुम बड़े बाबु जी से कहो। नहीं तो————।"

ज्योति ने मन ही मन में निर्मल प्रभा की इन बातों पर विचार किया। और कहने लगी————"क्या मुझे आज बड़े बाबू जी से इस विषय में प्रार्थना करनी पड़ेगी। उस

दिन के पश्चात ज्योति ने लक्ष्मी कान्त से बात चीत करना तो अलग रहा, उस की सूरत तक नहीं देखी थी। किन्तु आज उसे उन से भी बात चीत करनी पड़ेगी।——— "असम्भव"——————।"

किन्तु इस के सिवाय और उपाय ही क्या था। अन्त ज्योति ने एक सेवका को चार आने इनाम देने का लोभ देकर बाबू के पास भेजा। उसने बड़े बाबू जी से जाकर कहा ——————"भावज जी! बुला रही है। कोई अति आवश्यक कार्य है।"

उत्तर मिला——————"क्या काम है? बड़े बाबू जी इस समय काम में लिप्त है। नहीं आसकते। यह टका सा और कोरा उत्तर लेकर सेवका चली आई। जब ज्योति ने सेवका के मुख से बड़े बाबू जी का यह सम्वाद सुना, तो उस की आंखो में आंसु भर आये। उसने यहां पल भर भी ठहरना उचित खयाल न किया।

वह सीधे अवनाश के कमरे में चली गई। अवनाश चारपाई पर बेसुध पड़ा सो रहा था। और निर्मल प्रभा पास बैठी पखा कर रही थी।

ज्योति ने निमल प्रभा को सम्बोधित करके कहा——— "अब तू जा। स्नान इत्यादि से निवृत हो कर देवर जी के लिये सागूदाना ले आ।"

निर्मल प्रभा चली गई। उसके जाने के पश्चात् ज्योति

अवनाश के चेहरे की ओर देखती हुई चुप बैठी रही। वह विचार करने लगी————"कि क्या इतने बड़े घर में एक मनुष्य भी ऐसा नहीं, जिसके हृदय में पीड़ा हो। उसे यह घर नर्क प्रतीत होने लगा। और इस घर में रहन सहन रखने वाले सब अत्याचारी और निर्दयी दृष्टि गोचर होने लगे।

इतने में निर्मल प्रभा सागूदाना बनाकर ले आई। ज्योति ने चमचे में अवनाश को खिलाना आरम्भ किया।

अवनाश सो रहा था। ज्योति ने पुकारा———— "देवर जी!"

अवनाश ने कहा————"ऊ!"

ज्योति ने कहा————"थोड़ा सा सागूदाना खालो।"

अवनाश ने आंखें मल कर देखा और नन्हे बालक की भान्ति मुह फैला कर सागूदाना खाने लगा।

उस समय ज्योति ने निर्मल प्रभा से कहा————तू अब जा! भोजन कर शीघ्र लौट कर आने की करना। तू यहां आ जायेगी तो मै जाऊगी। ऐसे रोगी को अकेले छोड़कर जाना उचित नहीं।"

निर्मल प्रभा ने अवनाश के शरीर पर हाथ रख कर कहा————"सख्त ज्वर चढ़ा है।"

————"हा।" कहकर ज्योति चुप हो गई।

बहुत रात बीते ज्योति ने थोड़ा सा भात पानी के घूंटों

से किसी न किसी प्रकार कण्ठ से उतार कर अवनाश के कमरे में आकर कहा————"निर्मल अब तू जाकर विश्राम कर।"

————"और तुम?"

————और मैं अभी यहां बैठी हूं। जब उन्हें सुध आयेगी और तबीयत सम्भल जायेगी, तो मैं भी तेरे पास आकर सो रहूंगी।"

निर्मल प्रभा ने जाने में कोई आपत्ति न की। वह जानती थी कि ज्योति अपने धुन की पक्की है। यह कभी भी नहीं मानेगी। यह सोचकर वह अपने कमरे में चली गई। और ज्योति उस रात भी पिछली रात के समान, अवनाश के सिरहाने बैठी पंखा करती रही।

(२२)

रात बहुत बीत चुकी थी । लगातार कई रातों तक जागृत रहने के कारण ज्योति थकावट से चकना चूर हो गई थी। निद्रा के मारे उस की दोनों आंखें झुकी पड़ती थीं । पंखा करते करते कभी उस का सिर अबनाश के तकिये के सिरे से लग जाता था। उस की ओर उसका ध्यान ही न था। अकस्मात सख्त ज़ोर का धक्का लगने से उस की आंख खुल गई। वह उठ बैठी। भय से कांपती हुई बैठ गई । देखा सन्मुख लक्ष्मी कान्त खड़ा है।

लक्ष्मी कान्त ने आते ही कहा———"तत्काल बाहर निकल आओ।"

ज्योति ने अबनाश की ओर देखा। वह इस समय भी नीन्द

का स्वाद ले रहा था। लक्ष्मी कान्त कहीं चिल्ला न उठे और कोलाहल में अवनाश की नीन्द उचट न जाये, इस भय से ज्योति दबे पाओ लक्ष्मी कान्त के पीछे पीछे हो ली।

लक्ष्मी कान्त ज्योति का हाथ पकड़ कर उसे बलात्कार अपने कमरे में खैच लाया। तत पश्चात कमरे का द्वार बन्द कर दिया। अन्त उसने इन शब्दों से ज्योति को सम्बोधित करते हुये कहा———"साधवी ! पतिव्रता !! सति !!! इस कमरे में इतनी रात गये तुम क्या कर रही थीं। मैं यह जानना चाहता हूं।"

ज्योति लक्ष्मी कान्त को इस प्रकार बात चीत करते देख कर सहम गई। और मन ही मन में कहने लगी———
"चोरों के समान, यह खींच तान———यह आक्रमण ———"इस असह्य अग्नि से इस का सिर ठन ठन करने लगा। लक्ष्मी कान्त ने इस का हाथ पकड़कर उसे जोर से धक्का दिया और बोला———"बताती क्यो नहीं ?"

इस संदेह और भ्रम के कारण, जो लक्ष्मी कान्त के हृदय में उत्पन्न हो चुका था, ज्योति मन ही मन में क्रोध कर रही थी। और उस के इस तरह दुत्कार—फटकार करने और उस छेड छाड़ से उस का हृदय भर आया था। वह अन्त बोली———"अवनाश बाबू को ज्वर हो गया है।"

उस की इस बात से नम्रता टपकती थी।

लक्ष्मी कान्त ने मुसिकरा कर कहा———"अवनाश पर बड़ी कृपा दृष्टि मालूम होती है। इस कमरे में तो सोई

नहीं । वहां जाकर अवनाश के विस्तर पर उसके संग लेटी थी ।"

ज्योति मन ही मन में विचार करने लगी और कहने लगी————"क्या ही अच्छा होता, यदि वह इस हास-परिहास को किसी प्रचन्ड अग्नि में डाल कर इस को भस्म कर सकती ।--"नीच ! पापी !!। चण्डाल" ।।। ज्योति देर तक ध्यान से लक्ष्मी कान्त की ओर देखती रही । अन्त धीमे स्वर से बोली————"चुप रहो । तुम्हें ऐसी बातें मुख से निकालते लज्जा भी नहीं आती ।" ।

लक्ष्मी कान्त कड़क कर बोला————"चुप रहू ।. मुझे किस बात की लज्जा आयेगी । ओहो । अब हमें आंखे दिखाती है धोबी के कुत्ते को अपने सिर आंखों पर जगह दी है न" ? इसी लिये लाल पीली आंखे दिखा रही है । जो तेरे मन में आयेगा क्या तु वही करेगी ?"

ज्योति की आंखों में एक बार बिजली कून्द गई । क्रोध भरी आंखों से उस की ओर देखते हुई बोली————"जिह्वा संभालो ! कहीं कीड़े न पड़ जायें ।"

लक्ष्मी कान्त ने गरज कर कहा:————"यदि कल ही तेरा सिर मुन्डवा कर और गधे पर स्वार कराकर तुझे घर से न निकालदूं, तो मेरा लक्ष्मी कान्त नाम नहीं ।"

ज्योति ने कहा————"बहुत अच्छा ! जो तुम्हारे मन में आये वही करो । मैं चाहे कितनी ही बुरी क्यो न हूँ ।

किन्तु एक दिन तुम ही मुझ से विवाह करके अपने यहां लाये थे। मैं स्वयं तो नहीं चली आई। पत्नि कहकर मुझे तुमने कई बार पुकारा भी है। मैं तुम्हारे पैरो पड़ती हूँ कि अा इतना गोल माल न करो। मैं स्वयं इस घर में पल भर भी नहीं रहना चाहती। मैं स्वयं ही उक्ता गई हू। कल प्रात:काल ही चली जाऊंगी। अब इतनी रात गये कोलाहल न मचाओ! उधर सुसर जी सो रहे है। उनका भी खयाल रक्खो, मैं चाहे कैसी ही सही, किन्तु तुम तो इस उजड़े घर के दीपक हो? इतनी बड़ी कुल की मान-प्रतिष्ठा में वट्टा न लगाओ। सब तुम्हें ही बुरा भला कहेंगे। मैं सर्वथा निर्दोष हूँ।"

——"बस बस मुख बन्द कर! मैं तुम्हारी जिह्वा से इस प्रकार के उपदेश नहीं सुनना चाहता।"

————"बहुत अच्छा मैं चुप रहती हूँ। परन्तु तुम भी चुप रहो। यदि तुम मुझे इस घर से निकाल दोगे, तो मैं स्वयं को शुभ भाग्य समझूंगी।"

————" यह तो होगा ही। चियून्टी की जब मौत आती है तो उसके पंख निकल आते हैं। आज तो तुम किसी न किसी तरह रात व्यतीत करो, कल्ह प्रात' काल देखा जायेगा मैं तुम्हारी ऐसी गत बनाऊंगा। कि तुम्हें छटी का दूध याद आ जायेगा।"

यह कहकर लक्ष्मी कान्त ने द्वार खोल कर बाहर की राह ली। थोड़ी देर पश्चात आंगन में किसी के चिल्लाने की

आवाज आई———"सूअर" ! "पाजी" !! "कुत्ते" !!! इन शब्दों के साथही किसी के भूमि पर गिरनेकी आवाज़ सुनाई दी।

जिस भय से ज्योति ने इतना सख्त अपमान चुप चाप सहन किया था, मुख से एक बात भी न निकाली थी——— अन्त वही हुआ। वह आंगन की ओर भाग गई——— जाकर देखा———अबनाश भुमि पर बेसुध पड़ा था और उसके सन्मुख लक्ष्मी कान्त खड़ा कुत्ते की भान्ति हांप रहा था।

ज्योति बगोले की भान्ति वहाँ जा पहुंची। उसने लक्ष्मी कान्त को ज़ोर से धक्का देकर दूर फैंक दिया और अबनाश का सिर अपनी गोद में लेकर भुमि पर ही बैठ गई।

कोलाहल सुन कर निर्मल प्रभा भी वहां आ गई थी। उसे देखकर ज्योति ने कहा————"निर्मल प्रभा थोड़ा पानी तो ले आ। देवर जी की दशा ठीक नहीं है।"

निर्मल प्रभा पानी लाई। ज्योति ने अबनाश का मुंह धोया। लक्ष्मी कान्त कुच्छ देर तक चुप खड़ा रहा। ज्योति का यह बर्ताव देख कर वह चकित रह गया। निर्मल प्रभा ने लक्ष्मी कान्त को सम्बोधित करते हुये कहा——"बड़े दादा ! आप अब जाकर विश्राम कीजिये। अबनाश बाबूको जिस समय सुध आ जायेगी, हम दोनों उन्हें दूसरे कमरे में ले जायेंगी।"

निर्मल प्रभा की यह बात सुनकर वह कुच्छ उत्तर दिये बिना भय भीत बालक की भान्ति धीरे धीरे पग उठाये अपने कमरे की ओर चल दिया।

(२३)

रा
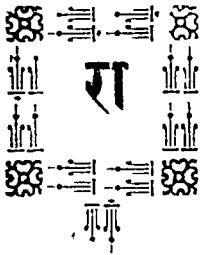
त्री के पिछले पहर अबनाश को कुच्छ सुध आई तो वह वहां से उठ कर अपने कमरे में चला गया। ज्योति निर्मल प्रभा के कमरे में चली गई। बात चीत में ज्योति ने इन सब बातों से, जो उस की लक्ष्मी कान्त से हुई थीं; निर्मल प्रभा को परिचित कर दिया। निर्मल प्रभा ने कहा ——————"तुमने इन बातो से मुझे पहिले परिचित क्यो न किया? नहीं तो इतनी बात यहा तक तूल न पकड़ती।

ज्योति ने कहा——————"निर्मल! मैं इन बातों से तुझे कैसे परिचित करती? क्षमा करना! शास्त्रो का कथन है कि पति स्त्री का देवता है! शास्त्रों की आज्ञा सिर आंखो पर!

यदि संसार में देवताओं के सन्मान और प्रतिष्टा में न्यून्ता आगई है, तो क्या हमें भी अपने पति का अनादर करना चाहिये।

निर्मल प्रभा————"कल यदि बड़े बाबू जी से इन बातों की चर्चा हो, तो क्या तुम उस समय यह सब बातें उन के सन्मुख कह सकोगी?"

ज्योति————"क्या यह सब बातें उन के सन्मुख कहनी होंगी? क्या तू यह सोच सकती है कि मैं यह सब बातें उन के सन्मुख कह सकूंगी? यह बात कौन उठायेगा और बातें क्या होंगी? भला बताओ तो?"

निर्मल प्रभा————"यही बात? जो उन्हों ने तुझे कही थी कि कल अपमान करके घर से निकाल दूंगा?

ज्योति————"पागल होगई है क्या? किसी की क्या शक्ति है जो ऐसा करसके? झूठी हवा बांधने से तू इतना भय खाती है। तेरे बाबू जी का यदि इतना साहस होता! उनमें इतना उत्साह होता तो फिर रोना क्या था? उन की उपस्थिती में इस घर में इतना बड़ा पाप?"

ज्योति ने पुनः कहना शुरु किया।————"इस घर में सब एक दूसरे से भय खाते हैं। कहीं बाद में ईंट का उत्तर पत्थर न दिया जाये। किसी को किसी से बुरी भली बात कहने का भी साहस नहीं होता? मान लिया यदि उन्हो ने यह बात अपने मुख से निकाली भी हो, तो क्या तुम विश्वास

पूर्वक कह सकती हो कि तेरे बड़े बाबू जी किसी के सन्मुख इस बात को ठीक स्वीकार कर लेंगे ? ———— कदाचित नहीं———— उन्हे इस बात की परवाह नहीं, चाहे मैं इन सब बातों से संसार को परिचित भी करदूं ।"

ज्योति की यह बातें सुनकर, निर्मल प्रभा का समस्त शरीर कांप उठा । और मन ही मनमें वह-कहने लगी——— "उनकी बात———— इस में तो मेरा भी अपराध था ? ——.——इन बातो से मेरा भी कुच्छ सम्बन्ध है ।"———

प्रत्यक्ष रूप में रोते हुये बोली———— "भावज जी !" इस के बात चीत के ढंग में तो नम्रता पाई जाती थी ।

ज्योति ने कहा———— "निर्मल प्रभा ! भय खाने का कोई कारण नहीं ? मैं किसी से कुछ भी न कहूँगी ! यदि मुझे बिना किसी अपराध के इतना सख्त अपमान सहन करना पड़ेगा तो करूंगी ! यदि मुझे यह घर छोड़ना पड़ेगा तो मैं इस घर को बिना किसी आपत्ति के छोड़ दूंगी । जिस पर तेरा दुःख सुख निर्भर है, मैं उस के विषय में एक शब्द भी मुख से नहीं निकालूंगी ? कल प्रात काल यदि मुझे झाड़ू मार मार कर भी घर से निकाल दिया गया, तो फिर भी मैं कुच्छ न कहूँगी ।"

निर्मल प्रभा चुप बैठी रही । वह मन ही मन में इन बातों पर विचार करने लगी ! और कहने लगी———— "ज्योति के हृदय में जितना बल है । यदि उसका $\frac{1}{100}$ भाग भी मुझ

में होता तो मेरी आज यह अवस्था न होती ? हृदय की निर्बलता के कारण ही मुझे प्रत्येक से झूठी सच्ची बातें सुननी पड़ती हैं।"

ज्योति ने पुनः कहना आरम्भ किया——————"निर्मल ! क्या तू मेरी एक बात सुनेगी ? स्मरण रख ! मैं जिस दिन यह घर छोड़कर चली जाऊं। उस दिन जिस तरह भी हो सके तुझे भी इस घर को छोड़कर, अपने पति के पास जाना होगा। यदि तेरा पति घर में उपस्थित न हो कहीं बाहर गया हुआ हो, तो भी तुझे यह घर छोड़ना होगा। यदि तू यह न कर सके, तो तूने अपनी जान पर खेल जाना। यदि भविष्यमें इस अत्याचारी, निर्दयी, दुराचारी की छाया भी तुझ पर पड़ेगी, तो याद रख ! यह तेरे सत्यानाश का कारण होगी। यदि तेरे इन कामों की भिनक तेरे स्वामी के कानों में पड़गई, तो याद रख, तेरे स्वामी को यह बातें सुनकर सख्त गलानि होगी। मेरी इन बातों को पत्थर की लकीर समझ। तू कलंक अपमान, अनादर, के भय से एक मनुष्य के कितने बड़े विश्वास का गला घुट कर उसे विना आई मौत मार रही है। तू यह नहीं समझती। इतना भी डर किस काम का ? यदि तु एक दिन भी सिर ऊंचा करके खड़ी हो जाती ? तो देखती यह दुराचारी तेरे सन्मुख पत्ते की भान्ति थर थर कांपने लगता। और उसे तेरी ओर दृष्टि उठाकर भी देखने का साहस न होता ? पापी चाहे कितना

हो बलवान क्यो न हो। परन्तु याद रख ! उस से बढ़कर निर्बल, डरपोक, बलहीन संसार भर में कोई नहीं। तूने मेरी इन बातों को सच्चा ही समझना।"

ज्योति की इन बातों ने निर्मल प्रभा के हृदय पर विचित्र प्रभाव डाला। वह जार ज़ार रोने लगी। और कहने लगी ———मैं कल ही यहां से चली जाऊंगी। तुम मेरे वहां जाने का प्रबन्ध कर दो। वहां मेरा अपना घर है। वहां मुझे किसी प्रकार का कष्ट न होगा———और न मैं किसी से भय खाती हूं।———यदि मैं वहां अकेली भी रही तो फिर भी मुझे किसी का भय नहीं।"

ज्योति कहने लगी———"परन्तु तुझे वहां पहुंचाने कौन जायेगा! अवनाश बाबू यदि निरोग होते, तो मैं उन्हें तुझ को वहां पहुंचाने को कहती, किन्तु उन्हें तो अभी ज्वर हो नहीं छोड़ता। अवनाश बाबू को ज्वर की अवस्था में तेरे बड़े बाबू जी ने मारा पीटा है। जिस के कारण वह और भी निर्बल हो चुके है। और अब यात्रा का कष्ट उठाने के योग्य नहीं।"

यह कह कर वह चुप हो गई। कहीं इन साधारण बातो की अवनाश के कानों में भिनक न पड़ जाये, इस भय से वह कमरे से उठ कर बाहर चली आई। उसने कमरे से बाहर निकलते समय अवनाशसे यह भी न पूछा, "कहीं तुम्हें अधिक कष्ट तो नहीं?———सख्त चोट तो नहीं आई।"

थोड़ी देर चुप रहने के पश्चात ज्योति ने फिर कहना आरम्भ किया————"मुझे संदेह है" ?

निर्मल प्रभा ने बात काट कर कहा———"भावज जी ! कैसा संदेह" ?

ज्योति ने कहा————"निर्मल ! जाने दे ! इन व्यर्थ की बातों पर विचार करने से क्या लाभ ?"

यह कह कर ज्योति ने फिर चुप साध ली। और कोई बात मुख से न निकाली।

आकाश पर दूज के चान्द की चमकीली लकीर तिलक के सदृश जग मगा रही थी। तारे ज्योत्सना में भोग विलासियों की भान्ति, अध खिली आंखों से भुमि की ओर दृष्टि जमाये हुये थे। बहुत देर तक आकाश की ओर ध्यान की दृष्टि से देखने से ज्योति की आंखें चुंध्या गईं। उस समय उसे ऐसा ज्ञात होता था मानो तारे संसार निवासियों की बुरी अवस्था को देख कर भय से सहमे जा रहे हैं। ————असार संसार की धूलि उड़ उड़ कर कहीं इस शुद्ध————निर्मल आकाश को भी निर्मलता के स्थान में अपवित्र और अशुद्ध न करदे, इस खयाल से तारे चुप बैठे हुये अफसोस प्रकट कर रहे थे। अन्त एक गहरी सांस लेकर ज्योति ने निर्मल प्रभा से कहा————"निर्मल जरा जाकर देखो तो सही अबनाश बाबू क्या कर रहे हैं। निर्मल चली गई। थोड़ी देर के पश्चात वापस आ कर

कहने लगी।————"भावज ! अवनाश बाबू तो वहां नहीं है।"

————"क्या" ?

निर्मल प्रभा की यह बात सुन कर ज्योति चकित रह गई । अन्त कहने लगी————"निर्मल । वह कहां जायेगा, यहीं कहीं होगा। चल मैं भी तो देखूं ?"

ज्योति और निर्मल दोनों ने घर का कोना कोना छान मारा । यदि अवनाश वहां होता, तो मिलता। अन्त दोनों उस के कमरे की ओर चल दीं। कमरे में जब दोनो ने प्रवेश किया तो उन्हें अवनाश के पलग पर तकिये के नीचे एक पत्र पड़ा हुआ मिला। ज्योति ने उसे खोल लिया। पत्र उसी के नाम लिखा हुआ था। एक साधारण खाकी कागज़ के एक टुकड़े पर फीकी स्याही से कुछ लिखा हुआ था। उसमें लिखा था————

"भावज !

"मैं जाता हू ! न मालूम कहां ? इस घर में रहन सहन रखने से तो कहीं सड़क के किनारे मर जाना बहुत अच्छा होगा ! मेरे ही कारण आप को ऐसी अनुचित बातें सुननी पड़ीं । ऐसे अनुचित शब्द सहन करने पड़े । मैं इन सब के लिये आप से क्षमा का प्रार्थी हूं और क्या कहू ? ईश्वर जानता है बालावस्था में ही मेरी माता का देहान्त हो गया था। आप को पाकर मै माता के वियोग का दु ख

भूल गया था। अपने पति का यह बुरा बर्ताव देख कर साहस न त्याग देना। धैर्य्य और शान्ति को हाथ से न दे बैठना ? अपनी हक तल्फी न होने देना ? इस घर के सुधार का भार सब आप पर है। यदि आपने इस काम में सुस्ती की और सुधार का भार जो तुम पर है न सम्भाल सकीं, तो ईश्वर के सन्मुख आप को उत्तर दायी होना पड़ेगा। मैं कुछ दिनों के पश्चात अवसर पाकर फिर आप के दर्शन करूंगा ? मेरे लिये किसी तरह की चिन्ता न करना ? सरकारी हस्पताल की उपस्थिती में अवनाश मार्ग की ठोकरें खाकर नहीं मरेगा। उस पर आप की जो कृपा दृष्टि है, आप उस को जिस स्नेह की दृष्टि से देखती हैं। उसने अवनाश को जीवित रहने के लिये विवश कर दिया है।"

आप का
"अवनाश"

पत्र का लेख समाप्त हो गया। ज्योति की दोनो आंखों से टप टप आंसु गिरने लगे।

निर्मल प्रभा ने कहा——————"क्यों भावज जी ! क्या बात है।

——————"निर्मल ! जिस बात का संदेह था वही हुआ !"

——————"क्यों" ?

——————इस बुरी अवस्था में ज्वर में ग्रस्त होने के अतिरिक्त वह चले गये।

——————"हां ! ईश्वर उन का रक्षक हो।"

ल

क्ष्मी कान्त उस दिन से ही ज्योति को घर से निकाल देने का निश्चय कर चुका था। परन्तु वह अपने इस संकल्प में अब तक असफल रहा। उस का कारण यह था कि वह ज्योति को किसी तरह बिना किसी अपराध के घर से निकाल नहीं सकता था। यदि उसने बिना किसी अपराध के ज्योति को घर से निकाल दिया, तो उस को सख्त बदनामी होगी, इस खयाल से वह अब तक चुप रहा। और उसने ज्योति को घर से निकालने का नाम तक न लिया। वह किसी ऐसे अवसर की खोज में था, जिस से वह ज्योति पर दोष लगाकर उसको घर से बाहर निकाल सके। और उसको

इस प्रकार घर से निकाल देने से उस के सन्मान में अन्तर न आये। और वह अवसर उस को अब तक प्राप्त नहीं हुआ। अबनाश के चले जाने के समाचार से उसने असीम हर्ष अनुभव किया। उसका कलेजा हर्ष से बलियो उछलने लगा। वह उस समय वामा काली के पास गया। और ज्योति के विषय में जो कुछ भी उस के मन में आया, उस ने उसको कह सुनाया। वामा काली को सम्बोधित करके वह कहने लगा————"तुम नहीं जानतीं इसी चुड़ैल ने अबनाश को घर से बेघर किया है। कल रात मैं ने अपनी आंखों देखा है कि अबनाश अपने बिस्तर पर सोरहा था और उस के पास तुम्हारी यह पापिन बहु————अबनाश अच्छा और नेक लड़का था, वह कहां तक यह सब बातें सहन करता। वह सहन न कर सका और घर छोड़कर कहीं चला गया।"

लक्ष्मी कान्त की बातें सुन कर वामा काली को क्रोध आगया। वह मन ही मन में कहने लगी—ऐसे नेक स्वभाव, मिलनसार, हंस मुख पति की उपस्थिती में वह इस तरह कुल की मान प्रतिष्टा में वट्टा लगाये, यह बात असह्य है, मुझ से तो नहीं देखी जासकती। फिर वह लक्ष्मी कान्त से प्रत्यक्ष रुप में कहने लगी————"तुम अब मोन धारण करलो————चुप साध लो! मैं इस बखेड़े को स्वयं ही दूर किये देती हूँ। तुम्हे 'अब इस बात मे दखल देने की कोई

आवश्यकता नहीं।" यह कहकर वह वहां से उठकर ज्योति के कमरे मे गई। ज्योति उस समय अपने कमरे में न थी। वह निर्मल प्रभा के साथ सरोवर पर कपड़े धोने गई थी। भीगे कपड़ों में शरीर का सौन्दर्य काले बादलों में छुपे हुये चान्द के सदृश छुपा कर जब वह घर वापस आई, उस समय वामा काली ने कमरे की खिड़की से पुकारा———
"बहुमां! तनिक ऊपर तो आओ"———

वामा काली का उदास और सूखा चेहरा देखकर ज्योति कांप उठी। वह भीगे हुये कपड़े पहने ही तत्काल उस के पास चली आई। बामा काली ने ज्योति को सम्बोधित करके कहा———"बहुमां! क्या तुम्हें कुच्छ खबर है कि अबनाश कहां गया है।"

———"बुआ जी! वह तो कहीं चले गये है।"

———"क्यों? एका किनी वह लड़का घर छोड़ कर क्यों कहीं चला गया? और कहां गया?"

———"मुझे क्या खबर?

———"कल रात तुम कहां सोई थीं?

———"केवल कल रात को ही क्यों? परसों रात भी तो मैं वहीं थी। देवर जी को ज्वर चढ़ गया था। इस लिये मैं उन के पास बैठी रही।"

———"ज्वर चढ़गया था? अबनाश ज्वर में ग्रस्त हो गया था, मुझे तो खबर तक नहीं और न उसके रोग में

ग्रस्त हाने की खबर घर के किसी दूसरे अदमी को मालूम है। आज केवल तुम ही कह रही हो कि अवनाश को बुखार चढ़ गया था। यह बात कहां तक सच्ची है ? मुझे तो यह बात झूठी मालूम होती है ?"

— ———"परसो से वह ज्वर में ग्रस्त हो गये थे। बहुत सख्त बुखार था—१०२ डिगरी। कल रात उन्हो ने खाना भी न खाया। थोड़ा सा सागूदाना खाकर वह अपने कमरे में बिस्तर पर लेटे रहे।"

————"बहुमां! मैं यह बातें सुनना नहीं चाहती। वह बेचारा इतना नेक लड़का! ————और तुम ने उस पर ऐसी दृष्टि डाली ?"

ज्योति वामा काली की यह बात सहन न कर सकी। और कड़क कर बोली————"बुआ जी!"

वामा काली ने बात काट कर कहना शुरू किया ————"तुम मुझे आंखें दिखा रही हो ? सोचा था तुम्हे कुछ न कहूँगी, परन्तु तुम तो सच्ची बात मुख से कहलाना ही चाहती हो ? एक तो तुमने इतना बड़ा पाप किया। और फिर इस पर यह पाजीपन ! लज्जा तो नहीं आती ? ऊपर से लाल पीली आंखें निकाल रही हो ?"

ज्योति ने ऊंचे स्वर से कहा————"बुआ जी ! क्या बकबक कर रही हो ? कैसा पाप ? तुम से यह बात किसने कही है ?"

————"और किसी को कहने का क्या प्रयोजन ? जिसकी

छाती पर हान्डी चढ़ी हो, उसी ने कहा है । और कौन कहेगा? इस घर में तेरी यह बातें नहीं चलेंगी ? अपने पिता के यहां जाकर जो कुछ तेरे मन में आये करना ?"

"मै भी इस घर में अब रहना नहीं चाहती। मैंने भी अब यहां से चले जाने का दृढ़ निश्चय कर लिया है ?"——————दिनदिहाड़े जब यहां ऐसे अत्याचार हो रहे है। सैंकड़ो दोष लगाये जा रहे हैं, तो फिर यदि वहां से मनुष्य चला न जाये तो और क्या करे ? बुआ जी ! तुम सच कहती हो, और यह बात भली प्रकार मेरी बुद्धि में अंकित हो चुकी है कि मेरे लिये इस घर मे रहन सहन रखना अति कठिन है।"

——————"क्यो ? मेरे मुख पर तुझे ऐसी ऐसी बातें कहने का साहस कैसे होगया ? अस्तु, मैं आज ही तुझे इस घर से निकाल बाहर करूंगी। और तुझे भली प्रकार बतला दूंगी कि इन बातो का परिणाम क्या निकलता है ?"

यह कहकर वामा काली क्रोध से थर थर कांपती हुई वहां से चली गई। ज्योति ने हंसते हसते निर्मल प्रभा को सम्बोधित करके कहा——————"निर्मल मैं तो आज जाती हूँ।"

——————"क्यो ? भावज !"

"बुआ जी ने स्वयं ही आज मुझे जाने के लिये कह दिया है।"

——————"भावज ! फिर मैं क्या करूंगी ?"

——"सुन निर्मल ! यदि तु अपना भला चाहती है, तो आज ही और तत्काल अपने पति को यहां की अवस्था से परिचित करदे। और उन्हें स्पष्ट रूप से लिखदे, कि वह आकर तुझे ले जायें। अब यहां तेरा ठहरना किसी अवस्था में भी अच्छा नहीं। यदि दोचार दिन और तुझे यहां ठहरना पड़े। तो तुने यह दिन सेवकाओं के साथ रहकर व्यतीत कर देना। यह भी स्त्रियां हैं। स्त्री चाहे कितनी ही बुरी प्रकृति की क्यों न हो, किन्तु वह अपनी आंखों से किसी अबला का सतीत्व नष्ट होते नहीं देख सकती।"

इस के पश्चात दोनों ही अपने अपने कमरे में चली गई।
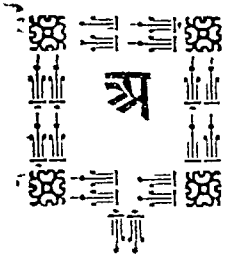
अन्त निर्दोष ज्योति पर दोष लगा कर उस को घर से निर्वासित कर दिया गया। और ऐक सेवका के साथ, उसे उस के मायके भेज दिया गया। ग्राम निवासी जो ज्योति के सौभाग्य को देख देख करईर्षा की अग्नि में जला करते थे, वह आज ज्योति को इस प्रकार एक सेवका के साथ आते देख कर चकित रह गये। वह परस्पर काना फूसी करने लगे। कोई कुच्छ कहता था और कोई कुच्छ। इस से पहिले एक वार जब ज्योति अपने मायके आई, तो उस के साथ अन-गणित नौकर चाकर और सेवकायें थीं। और उस समय वह राज रानी प्रतीत होती थी। परन्तु इस बार जब वह आई, तो उस के साथ केवल एक सेवका थी————समिग्री भी

साधारण ! केवल एक विस्तर !————यह बात क्या है ?

लोगो की समझ में यह बात न आई । अन्त किसी न किसी तरह ग्राम निवासियों ने वास्तविक बात का पता लगा ही लिया । धीरे धीरे जाति वालो के कानो में इस बात की भिनक पड़ गई । और उन्हो ने शोर मचा दिया । ज्योति के मायके आने के चार पांच दिन पश्चात, लोगों ने आकाश सिर पर उठा लिया । वर्षा ऋतु के बादलों की भान्ति सीधे साधे ग्राम निवासीयो ने गरजना शुरु किया।

ज्योति को लक्ष्मी कान्त चौधरी ने अपने घर से क्यों निर्वासित कर दिया है, इस बात पर विचार करने के लिये जाति वाले चन्डी के मन्दिर में एकत्र हुये । भट्टाचार्य महाशय को भी बुलाया गया । जब वह मन्दिर में आये, तो उन से उत्तर मांगा गया कि वह कारण बतलायें कि उन्हें जाति से क्यों न परित्यक्त कर दिया जाये । या तो उन्हे अपनी कन्या से सम्बन्ध तोड़ना पड़ेगा या जाति वालों से । उन्हों ने ज्योति को सुसराल से इस प्रकार निकाले जाने पर अपने यहां क्यों स्थान दिया है ।

भट्टाचार्य महाशय ने उत्तर में कहा————इस विषय में ज्योति निर्दोष है ।"

जाति वालो ने एक स्वर हो कर कहा————"यह असम्भव बात है ।"

ऐसी सुन्दर पत्नि को कोई यूं ही बिना किसी अपराध के अपने घर से निर्मासित कर सकता है? कुच्छ न कुच्छ बात अवश्य है।"

भट्टाचार्य महाशय ने ज्योति के मुख से जिस प्रकार सब बातें सुनी थीं, वह वास्तविक रुप में सब जाति वालों को कह सुनाईं।

जाति वालो के पास ऐसा कोई परमाण न था, जिस को सन्मुख रखकर वह ज्योति पर दोष लगाकर उसे जाति से परित्यक्त कर सकते। जाति वालो ने जब भट्टाचार्य महाशय के मुख से अबनाश का नाम सुना, तो वह यह सुन कर बलियों उछल पड़े। उनके हर्ष की कोई सीमा न रही। उन्हें घर बैठे ही परमाण मिल गया। अब उन्हे परमाण के लिये इधर उधर भटकने की आवश्यकता न रही।

भट्टाचार्य महाशय ने कहा———"कि ज्योति इस विषय में सर्वथा निर्दोष है। अबनाश ने ज्योति को मां कहा है। अबनाश का एक पत्र भी ज्योति के नाम आया है। यदि जाति वालों की इच्छा उस पत्र को देखने की हो, तो मैं वह पत्र दिखला सकता हूँ।"

परन्तु जाति तो पहिले से ही कुच्छ ऐसी बिगडी हुई थी कि उसने भट्टाचार्य महाशय की बातों को ध्यान से सुनने का कष्ट तक भी न उठाया। भट्टाचार्य महाशय की आंखों में आसु और उन का मुरझाया हुआ चेहरा भी किसी प्रकार

उन के हृदय को मोम न कर सका। और उन्हों ने स्पष्ट रुप से भट्टाचार्य्य महाशय को कह ही दिया————"कन्या को अपने घर में रखकर भट्टाचार्य्य महाशय को जाति से सम्बन्ध तोडना पड़ेगा। दोनों में से किसी एक का संग त्यागना पड़ेगा। या तो वह अपनी कन्या के साथ अपना सम्बन्ध रखें या जाति से। उन्हें इस विषय पर विचार करने के लिये दो दिन का समय दिया जाता है। वह दो दिन के पश्चात अपने निश्चय से जाति वालों को सुचित करें।"

घर आने पर भट्टाचार्य्य महाशय की दृष्टि सब से पहिले जिस पर पड़ी, वह ज्योति थी। उसे देखते ही वह चिल्ला उठे। और ऊचे स्वर से कहने लगे————"निर्लज्ज लड़की! तुझे मृत्यु भी न आई। यह मुख लेकर मुझे भी नष्ट करने के लिये तू यहां क्यों चली आई है।"

सुसराल वालों ने ज्योति का जो अनादर किया और जो बुरा बर्ताव उससे किया गया। उसे देख कर ज्योति का हृदय पहिले से ही फटा जा रहा था। इस पर पिता के मुख से ऐसी जली कटी बातें सुन कर वह तत्काल काटी हुई टहनी के सदृश कांप कर भुमि पर गिर पड़ी और देखते ही देखते घर से बाहर हो गई।

घर से निकलते ही वह सीधी नदी के घाट पर गई। उस समय घाट पर कोई न था। सूर्य देवता की सुनहरी किरणों ने नदी के पानी को अपने रंग में रंग कर रक्त की भान्ति लाल कर दिया था।

नदी के पानी को इस प्रकार लाल देख कर ज्योति के हृदय का रक्त भी जोश मारने लगा। वह धीरे धीरे पानी में उतर गई। उसका गर्व पानी से बार बार टक्कर खा कर एक भयजनक राग छेड़ रहा था। गले गले तक पानी में उतर कर ज्योति मन ही मन में कहने लगी————"क्यों क्या इसका नाम संसार है? क्या इसी क्षणिक चन्द रोज़ा नीच जीवन पर मनुष्य इतना अभिमान किया करता है। इस पाप-सागर में फंस कर जीवन व्यतीत करने से क्या लाभ? मनुष्य के हृदय में किसी मनुष्य के लिये नाम को भी पीड़ा नहीं।——ईर्षा-द्वेष——शत्रुता——स्वार्थ, छल——कपट, पाप और अत्याचार की अग्नि ही सब के हृदय में सुलग रही है। इसका कारण?

उसके पति की बातो की चर्चा जाने दो? पिता की बातें कैसी जली कटी थीं। पति ने तो उसे पाल पोस कर इतना बडा नहीं किया था? ज्योति की ओर तो उसने एक बार भी आंख उठा कर नहीं देखा। वह ज्योति को क्योंकर पहचानता और उसका आदर करता? परन्तु पिता जिसके हाथो पालन होकर वह इतनी बड़ी हुई है, जो उसकी रग रग से भली भान्ति परिचित है, उसी पिता ने आज उसे पैरों से ठोकर मार कर इस प्रकार घर से बाहर निकाल दिया। उसने इस बात पर तनिक भी विचार नहीं किया।

कि वह बेआश्रा कन्या ऐसे कष्ट में ग्रस्त होकर कहां खड़ी होगी। किधर जायगी और क्या करेगी — — —हाये वह किसका मुख देख कर अपने जीवन के शेष दिन व्यतीत करेगी————कुच्छ नहीं————कुच्छ भी नहीं————

परन्तु, इस अन्त समय में भी एक मनुष्य के देखने की उस के हृदय मे असीम इच्छा थी————उस के हृदय में उस मनुष्य के देखने की अभिलाषा थी, जिस के हृदम में उस ने सहानुभुति का सागर ठाठें मारता हुआ देखा था। जिस के हृदय में अनुकंपा कूट कूट कर भरी हुई थी। जो सहानुभुति का पुतला था। वह उस का कौन था? उस से ज्योति का क्या सम्बन्ध था। कुच्छ भी नहीं। जिसने प्राय हो कर भी ज्योति को अपनों से बढ़कर समझा था। जिसने अपनों से भी बढ़कर ज्योति का आदर किया था। जिस के उदार हृदय में ज्योति के लिये इतना दर्द था————ऐसा स्नेह था————ऐसी दया थी————जिस के हृदय में स्वार्थ का नाम तक भी न पाया जाता था। उसने ज्योति को कैसी कैसी सांत्वना दी थी। संतोषजनक बातें कहीं थीं। स्वयं कष्ट में ग्रस्त होने पर भी, उसने कैसा हृदय अकर्षक आशा का राग गाया था। उस के लिये कैसे कैसे कष्ट उठाये थे। न जाने किस किस की उलटी सीधी बातें सुनी थीं। काश मृत्यु समय वह उस अबनाश का दर्शन कर सकती!

और उसे स्पष्ट रूपमें कह सकती—"देवर जी! मुझसे यह तो अत्याचार सहन नहीं किया जासकता। कष्ट पर कष्ट आने लगे। धैर्य्य और सन्तोष हाथसे जाता रहा"। यदि वह आज उस देवता के पल भर के लिये किसी प्रकार दर्शन कर सकती तो मृत्यु समय उसके हृदय में किसी तरह की गलानि न होती। और वह प्रसन्नता पूर्वक अपने प्राण त्याग देती। अपनी जान पर खेल जाती।

जाति के लोगों के बीच में मन्दिर के एक कोने में एक पुरुष सिमटा सिमटाया चुप बैठा हुआ था। उसने एक शब्द भी मुख से नहीं निकाला। मधुसूदन भट्टाचार्य के मन्दिर से बाहर निकलते ही उसने भी उनका पीछा किया। भट्टाचार्य महाशय तो घर के अन्दर चले गये, परन्तु वह घर के बाहर ही खड़ा रहा।————उसने थोड़ी देर तक प्रतीक्षा की। जब किसी ने उसको अन्दर आने को न कहा, तो उसके लिये वहां अधिक देर तक ठहरना कठिन होगया। उसका हृदय बहुत घबराया। चेहरे पर उदासी छा गई।————अन्त उस पर ग़शी तारी हो गई। वह भूमि पर बेसुध होकर गिर

पड़ा। जब उसे कुच्छ सुध आई, तो उसने देखा कि ज्योति शीघ्रता से पग उठा तो, नदी की ओर चली जारही है। वह भी चुप चाप उस के पीछे चल दिया। जब ज्योति पानी में उतर रही थी, वह उस समय सीढ़ियों पर था। उसके पानी में लुप्त होते ही वह भी पानी में कूद पड़ा। और देखते देखते क्षण भर में उसने ज्योति को पानी से बाहर निकाल दिया। उस समय ज्योति ने पानीमें डुबकी लगाई थी। वह अभी डूबी नहीं थी। खैंचातानी से उसकी आंखें खुल गईं। उसने देखा सामने हेमन्त खड़ा है। उस समय सूर्य देवता अपना लाल चेहरा उस ओर के सघन जगलो में लज्जा के मारे छुपा रहा था

ज्योति ने कहा————"हेमू दादा! तुम मुझे क्यो नष्ट कर रहे हो।"

हेमन्त ने कहा————"ज्योति! तुम क्यों इस प्रकार मरना चाहती हो?"

——————"अब किस के लिये जीवित रहूँ। मेरे जीवित रहने से अब क्या लाभ?"

उसका उत्तर हेमन्त न देसका।

ज्योति ने कहा————"हेमू दादा! तुम मुझे छोड़ दो। मैं अब जीवित नहीं रहना चाहती। जीवित रहकर मैं क्या करूंगी।"

हेमन्त ने कहा————"ज्योति। मैं तुम्हें इस तरह मरने न दूंगा। जब तक मैं जीवित हुं। तब तक, तुम इस

प्रकार अपनी जान पर नहीं खेल सकतीं। यदि तुम मरना ही चाहती हो, तो सब से पहिले मैं मरूंगा ? मेरे मरने के पश्चात जो तुम्हारे मन में आये वही करना ? मैं अपनी आंखों के सन्मुख तुम्हे कभी भी मरने न दूंगा ?"

———"हेमुं दादा ! तुम यह क्या कह रहे हो । तुम नहीं जानते मेरे लिये ससार में कहीं भी ठिकाना नहीं ? यहां के लोग बुरी तरह मेरे पीछे पड़े हैं।"

———"तुम्हारे पति !"

———"हेमु दादा ! घाव पर नमक न छिड़को !" जाति का मगर मछ मुझे निगलने के लिये मुंह फैलाये, मेरी ओर दौड़ता हुआ आ रहा है। क्या तुम मुझे उस के आक्रमण से बचा सकोगे ? अकेले मेरी रक्षा कर सकोगे ? यह असम्भव बात है देखना कहीं तुम ने भी इस सुहावने क्रूर पजों में न फंस जाना।"

———"ज्योति ! जाति गई चूल्हे में। यदि तुम इस प्रकार आत्म घात करके अपनी जान पर खेल जाओगी, तो क्या फिर जाति तुम्हारा पीछा छोड़ देगी।"

———"कुच्छ हो ? परन्तु इस से मुझे क्या हानि पहुचेगी ! यह मेरी समझ में नहीं आता ?"

———"ज्योति ! मैं मिन्नत करता हूं ऐसी बातें न करो। यदि तुम्हें कहीं रहने के लिये ठिकाना नहीं मिलता, तो फिर मेरा घर किस लिये है।"

———"तुम्हारा घर !"

किसी बीती हुई घटना की स्मृति ने ज्योति की आंखों के सन्मुख एक हृदय अकर्षक चित्र चित्रित कर दिया——— वही घर————वह घर————जिसमें हेमन्त ने इस प्रकार उस की आशाओं—अभिलाशाओ को पगदलित किया था————उसे उस समय ऐसा अनुभव होने लगा, जैसे किसी ने उस के शरीर मै कई हज़ार सुइयां एक ही बार चुभो दी हो।

हेमन्त ने कहा——— ———"ज्योति! एक समय वह भी था, जब हम तुम दोनो दो शरीर और एक जान थे। उस के पश्चात कुच्छ ऐसी घटनाये उत्पन्न हो गईं, जिन्हो ने हमें एक दूसरे से पृथक्क कर दिया। क्या इस समय हम दोनो इस नदी में खड़े हुये एक दूसरे का मुख यू ही देखते रहेंगे।"

हेमन्त की आवाज़ थर थरा रही थी। उसने फिर कहना शुरु किया ————"ज्योति! आज मुझे पाप का भय नहीं। मै जाति की तनिक भी परवाह नहीं करता। तुम क्यो डरती हो? उस जाति ने तुम्हे क्या देदिया है। हार्दिक गलानि और अनादर के सिवा तुम्हें जाति ने क्या दिया है। आओ! ज्योति, आओ!! हम दोनों एक दूसरे का हाथ पकड़कर इस मन्द भाग्य जाति को दोनो पैरों से पग—दलित करके अपने हार्दिक द्वेषों को दूर करदें————"और हर्ष के गीत गायें और सितार की मद्धम झंकार को धीरे धीरे तेज़ करें। और सौभाग्य का राग गा कर मृत्यु—सागर में जाति वालो और लोक लाज

सब को डबोदूँ। ज्योति! क्या सोच रही हो ?"

ज्योति चुप खड़ी रही ? वह मन ही मन में सोच रही थी कि मृत्यु के किनारे खड़ी होकर, वह यह कैसा अभिनय देख रही है।

ज्योति के चेहरे पर सूर्य की गुलाबी किरणें पड़ रही थीं ———रंग में रंग मिल कर एक विचित्र दृश्य उत्पन्न हो गया था। एक संध्या को इसी प्रकार का एक दृश्य देखकर हेमन्त अपने आप में नहीं रहा था। आज भी उस की दशा ऐसी ही होगई थी।

हेमन्त अकस्मात ज्योति के पैरों पर गिर पड़ा। और दोनो पैर पकड़ कर बोला————"ज्योति! तुम मेरी हो।"

ज्योति ने उसके दोनो हाथों को अपने पैरों से हटाकर कहा———"हेमू दादा! यह तुम क्या कह रहे हो ? तुम जानते हो मेरा विवाह हो चुका है। हृदय में चाहे कुछ ही क्यों न हो ? परन्तु धर्म के अनुसार मैं किसी की हो चुकी हूँ। छी! पैर छोड़ो क्या इस खयाल के सिवा तुम मुझे और किसी प्रकार भी नहीं अपना सकते ? प्रेम करना कोई बहुत बड़ा पाप नहीं। परन्तु ख्याल अच्छे बुरे हर तरह के हो सकते हैं। हेमु दादा! इस के लिये चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं। मैं तुम्हारी छोटी बहिन हूँ।"

————"ज्योति! ज्योति॥" हेमन्त पागलों की भान्ति चिल्लाने लगा। ज्योति ने घुटने टेक कर हेमन्त का

हाथ पकड़ लिया और कहने लगी————"छी। क्या करते हो?" दादा पैर छोड़ो। उठो।"

ठीक उस समय एक नाव तीर के समान संसनाती हुई घाट पर आलगी। नाव की छत पर एक पुरुष बैठा हुआ था। किनारे पर आते ही वह नाव से उतर पड़ा। और सीढ़ियों पर ज्योति को खड़ा देखकर विस्मय में लीन होकर बोला ————"कौन भावज?"

ज्योति चौंक उठी————देखा अवनाश खड़ा है। बोली————"देवर जी।"

"भावज एक बात कहनी थी।"————

उस के मुख से अभी यही शब्द निकले थे कि इतने में उस की दृष्टि हेमन्त पर जा पड़ी। उसे देखते ही वह सीधा नाव पर जा बैठा। मलाहों को वापस चलने की आज्ञा दी। ज्योति ध्यान की दृष्टि से उसकी ओर देखकर बोली———— "देवर जी। आओ————तनिक मेरी बात सुनते जाओ ————आप मुझ से जो कहना चाहते हैं, वह भी कहते जाइये।"

————"भावज जी। कोई बात नहीं। मैं जाता हूँ।"

नाव जिस तेज़ी से आई थी, उसी तेज़ी से चली गई। जहां तक दृष्टि ने काम किया, ज्योति उस ओर दृष्टि जमाये देखती रही। और बोली————"उफ! ऐसा अविश्वास

ऐसा विश्वास घात ! इतनी शंका !! ——— इतना सदेह !!!———

इस के पश्चात उस ने पुकारा——— —"हेमु दादा !"

हेमुं नदी के उस पार चुप चाप जा खड़ा हुआ था । उस समय उस के मुख से एक अक्षर भी न निकल सका । ज्योति को अवसर मिल गया । वह मन ही मन में कहने लगी——— "उफ अग्नि ! ऐसीप्रचन्ड अग्नि !! आह समस्त शरीर जल रहा है । अब सागर में डूबे बिना यह अग्नि किसी तरह भी बुझ नहीं सकती । बहुत अच्छा ! यही सही ! मैं स्त्री हूँ । महान शक्ति हूँ । ————"शक्ति क्या नहीं कर सकती ? सब कुच्छ कर सकती है । मै भी करूगी । स्वयं नष्ट हो जाऊगी । ससार को भी नष्ट कर दूंगी । फिर मुझ पर कौन हंसी उड़ायेगा ? ————वह पापी मनुष्य————"वह क्या हसेगा ? ससार मुझे बुरा कहेगा ? क्यों ? और जाति ? उस का क्या होगा ? परमात्मा क्या अन्धा है ।

इस के पश्चात प्रत्यक्ष रुप में बोली————"हेमुं दादा क्या तुम मुझे चाहते हो ? सच सच बतलाओ ! सध्या का समय है । और नदी का किनारा है————"सोगन्ध खा-कर कहो———"क्या तुम मुझ से प्रेम करते हो ?"

————"ज्योति !"

यह कहकर हेमन्त ने ज्योति का हाथ पकड़ लिया ।

ज्योति ने कहा————"बहुत अच्छा————"चलो

मैं तुम्हारी हो कर रहुंगी। जब तक मुझे रक्खोगे, तुम्हारी सेवा करूंगी।"

इस के पश्चात संकोच तथा लज्जा को दूर करके हेमन्त का हाथ पकड कर वह उस के घर चली आई। सूर्य देवता अस्त हो चुके थे। अन्धकार सारे ससार पर धीरे धीरे पर्दा डाल रहा था। एक ओर से ज़ोर की आन्धी उठी। वही प्रलय की तेज आन्धी।

(२७)

ज्योति हेमन्त के साथ उसके घर तो आगई, परन्तु आते ही उसने कमरे में प्रवेश करते समय उस से कहा————"आज रात तुमने मेरे पास न आना। कलकत्ता जाना होगा। मैं यहां न रहूँगी। कलकत्ता पहुंच कर मैं तुम्हारी बनूंगी"

हेमन्त के पिता का देहान्त हो चुका था, उस की माता अभी जीवित थी। हेमन्त अब भी कभी-कभी गाओं आया करता था। माता ने हेमन्त को बहुत कुछ समझाया जिद की रोई। चिल्लाई। सिर धुना, परन्तु वह विवाह करने पर राज़ी न हुआ। माता विवाह के विषय में उसको कहते कहते तंग आ गई थी। अन्त विवश होकर उसने फिर इस विषय में

हेमन्त से बात-चीत करना उचित न समझा।

हेमन्त इस बार जब गाओं आया, तो उसने भट्टाचार्य महाशय की कन्या ज्योति के सम्बन्ध में बहुत बुरी बुरी बातें सुनीं। पहिले तो उसने इन बातों की ओर इस खयाल से बिलकुल ध्यान न दिया, कि देखूं इस का क्या परिणाम निकलता है। परन्तु जब इन बातों ने तूल पकड़ा, तो वह चकित रहगया। और ज्योति को प्राप्त करने को चेष्टा करने लगा। उसे कदाचित आशा न थी, कि वह ज्योति को इस प्रकार सुगमता से प्राप्त कर लेगा। वह ज्योति को पाकर हर्ष से कपड़ों में फूला न समाया।

हेमन्त ज्योति को लेकर कलकत्ता आया। वह अपने घर नहीं गया। किसी सुनसान महल्ले में उसने एक मकान भाड़े पर ले लिया। और ज्योति के साथ वहीं रहने लगा। वह ज्योति को ले कर बिलकुल पागल हो गया था। उसे अपने तन बदन की भी सुध न थी। ज्योति की सेवा के लिये उसने एक सेवका नौकर रख ली। रसोई बनाने के लिये एक ब्राह्मण रसोइया नौकर रक्खा गया। राग सिखाने के लिये एक हारमोनियम मास्टर की खोज की। ज्योति ने यह सब कुच्छ चुप चाप स्वीकार कर लिया

ज्योति ने अपने आप को बिलकुल हेमन्त के हवाले कर दिया था।————कांच के खिलोने लेकर बालक जिस प्रकार उनके साथ खेला कूदा करते हैं और खिलोने जिस प्रकार बालकों के अत्याचार तथा संकट चुप चाप

सहन करते रहते हैं, ज्योति भी ठीक उसी प्रकार हेमन्त का खिलोना बन चुकी थी। हेमन्त जिसे प्रकार उसे नाच नचाता था, वह नाचती थी। ज्योति के चेहरे पर यूं तो हर समय हंसी के चिन्ह दिखाई देते थे, किन्तु उस की हंसी में दीपक की हंसी छुपी हुई थी। यद्यपि प्रत्यक्ष रूप में वह मुसिकराती दृष्टि गोचर होती थी। परन्तु उसके मुसकान में हार्दिक आनन्द का नामो निशान तक न पाया जाता था। ज्योति की यह अवस्था देख कर हेमन्त मन ही मन में विचार किया करता था कि कहीं मेरा उस के संग परस्पर एक ही घर में रहना ज्योति की व्याकुलता, वेचैनी तथा दुःख का कारण न हो?

अन्त इस खयाल को सन्मुख रख कर एक दिन अवसर पाकर उसने ज्योति से पूछा————"ज्योति! यदि तुम्हारी इच्छा हो, तो मैं तुम्हारे लिये किसी अन्य मकान की खोज करूं?"

ज्योति ने कहा————"क्यों? इस मकान में रहने से क्या हानि है?"

हेमन्त ज्योति के इस प्रश्न का संतोषजनक उत्तर न दे सका और न वह यह बात उसकी बुद्धि में अंकित कर सका कि इस मकान को छोड़ने का क्या कारण है?

चूंकि वह ज्योति की ज्योतिर्मय सौंदर्य का प्रेमी था और उसके प्रेम के प्याले से मुग्ध हो चुका था। इस लिए

ज्योति ईश्वर न करे उससे किसी कारण से असन्तुष्ट होकर किसी दूसरी जगह चली जाये, तो उसकी क्या दशा होगी। यह एक खयाल था जो हर वक्त उसे बेचैन बनाये रखता था। और यही एक कारण था, जिससे वह ज्योति से प्रायः भय खाया करता था।

वहुत कुछ सोच बिचार करने पर भी, यह बात उसकी समझ में नहीं आती थी कि जिस आनन्द की अभिलाषा उसे प्रत्येक समय व्याकुल किये रहती थी, ज्योति को अपनाकर भी वह क्यो उसे प्राप्त होती दृष्टि गोचर नहीं होती। इसका क्या कारण था ?

ज्योति बातें करती है। हंसती है। प्रेम का हृदय आकर्षक राग विचित्र ढंग से गाती है। हृदय आकर्षक प्रेम भरी बातों से वह मन को लुभाती भी है। परन्तु फिर भी न जाने उस के चेहरे पर चिन्ता के चिन्ह क्यो दिखाई देते हैं। वह देखने में इस प्रकार प्रतीत होती थी जिस प्रकार दर्द भरी———— निराशा पूर्ण मूर्ति टकटकी लगाये खड़ी दिखाई देती हो। इस के क्या कारण थे ? हेमन्त बहुत विचार करने पर भी न समझ सका ?

एक दिन बहुत देर तक चुप रहने के पश्चात ज्योति ने हेमन्त से पूछा——"तुम कालिज में पढ़ा करते थे।"

हेमन्त ने चौक कर कहा——"हां !"

मैं एक लड़के को जानती हू। वह कलकत्ता के किसी

कालिज में पढ़ता है। क्या तुम उस से मिल कर मेरा यह संदेश उस तक पहुंचा सकते हो कि वह एक बार आकर मुझ से मिल जाये।"

ज्योति की यह बात सुन कर हेमन्त का हृदय धड़क उठा। वह सोचने लगा, आज यह नई बात कैसी ?

ज्योति ने फिर पूछा———"क्या तुम उसे यहां लासकोगे ?"

———"वह कौन है ? उस का क्या नाम है ? किस कालिज में पढ़ता है ? जब तक यह बातें मालूम न हों, मैं क्या कह सकता हूं ?"

———"उस का नाम अबनाशचन्द्र है। बी. ए. में पढ़ता है।"

———"किस कालिज में ?"

———"यह मुझे मालूम नहीं ?"

हेमन्त ने एक ठण्डी सांस लेकर कहा———"फिर उसका पता कैसे लग सकेगा। कलकत्ता में अनगणित कालिज हैं और सात आठ सौ लड़के पढ़ते हैं।"

———"तो क्या उसका पता नहीं लग सकता ?"

———"नहीं।"

उस रात राग रंग का खेल न जम सका। हेमन्त ने बहुत कुछ छेड़ छाड़ की। हास परिहास की कितनी ही बातें कीं। परन्तु ज्योति के ओंठों की मुसिकराहट, दुःख तथा

गलानि की ग़ार में छुप चुकी थी । उसने उस ओर ध्यान ही न दिया ।

दूसरे दिन हेमन्त के घर से बाहर जाने के पश्चात ज्योति ने एक दलाला को बुलाया। उस का पति इस फन मे काफी शोहरत रखता था। उसका नाम रसिक था । ज्योति ने उसके हाथ पर पांच रुपये रखकर कहा———"यदि तुमने उनका पता लगा लिया, तो मैं तुम को पांच रुपय और दूंगी।"

रसिक ने कहा———"यदि आदेश हो तो मैं सिंह का दूध ला सकता हूं। कालिज के लडके का क्या कहना?

रसिक मुसिकराता हुआ चला गया। ज्योति उस के मुसिकराने का तात्पर्य समझ गई । मन ही मन में कहने लगी———"नादान!"———

उस के पश्चात वह अपने कमरे में जाकर हारमोनियम बजाने लगी———हारमोनियम पर उसने जो गज़ल गाई, वह निम्न लिखत थी———

दिल मेरा वह लेगये, दर्दे महब्बत दे गये।
शमा ठंडी कर गये और सोजे फुरकित दे गये॥
मुंह छुपा कर क्या कहुँ, क्या क्या अजीयत दे गये।
दिल मे सदमे भर गये, आंखों को हैरत दे गये॥
क्या कहु कैसी निशानी, वक्ते रुखसत दे गये।
दिल की राहत छीन ली और दागे हसरत दे गये॥
इन फरिशतों से गिला है जो मकामे इश्क मे।
उन को सूरत दे गये, मुझ को महब्बत दे गये॥

गाना अच्छा न लगा। उस ने हारमोनियम बजाना बन्द कर दिया और छत पर आकर खड़ी हो गई। असीम नीला आकाश————बिल्कुल सुन्सान————"कहीं भी कुछ नहीं। चारों ओर विस्तृत सन्नाटा हू! हू!! का राग अलाप रहा था। इस विस्तृत और लम्बे सन्नाटे में सांस रुका जा रहा था। ज्योति विचार करने लगी।" "ओह! कैसा अन्धकार है। चारों ओर पाप ही पाप! इस पाप की दुर्गन्धि से वायु का सांस भी घुटा जारहा है। आकाश ने भी इस लिये नीला रूप धारण कर लिया है।"

धीरे धीरे उसे पिछली बातें याद आने लगीं————निर्मल प्रभा————लक्ष्मी कान्त————वामा कालों अवनाश और विवाह की बात चीत————फिर वह चन्डी का मन्दिर————पाप की कथा————और हेमन्त एक एक करके उसे सब कुच्छ याद आगया। चार पैसों के लिये इतना बुरा कर्म! ऐसा पाप!! छी! छी!! और वह क्यों गिर गई है! ऐसी कैसे और क्यों कर बन गई है। क्या वह स्वयं ही ऐसी बन गई है। क्या उस ने यह सब कुच्छ अपनी इच्छा से किया है या उसे ऐसा करने के लिये मजबूर किया गया है। ज्योति ज़ार ज़ार रोने लगी————"उस की आंखों से आंसु बहने लगे। नहीं! नहीं!! उस ने स्वयं यह नीच पेशा धारण नहीं किया। बल्कि उस के पति और पिता ने उसे यह पेशा धारण करने पर विवश कर दिया है। हां! हां!! याद आगया। उस के पति और उस के पिता

का इस में क्या दोष ? यह सब दोष जाति का है। उस समय उस की आंखों से आंसुओं की मूसला धार वर्षा होने लगी।"

वह इन बातों पर विचार कर ही रही थी कि उसे रसिक के सीढ़ियो पर चढ़ने की आहट सुनाई दी। ज्योति ने आंचल से आंखें पूंछ डालीं। रसिक ने आकर उस नवयुवक का जो हुलिया बतलाया वह अवनाश से मिलता था।

ज्योति ने कहा————"क्या एक गाड़ी भाड़े पर लाकर मुझे अभी और इसी समय उस नवयुवक से मिला सकते हो ? लो यह पांच रुपय !"

रसिक मन ही मन में अपने भाग्य पर अभिमान करने लगा। प्रत्यक्ष रूप में बोला————"बहुत अच्छा ! परन्तु कालिज बन्द होने में अभी एक घन्टा शेष है।"

गाड़ी आगई, दोनों उस पर स्वार हो गये। कालिज से दूर कुच्छ दूरी पर गाड़ी खड़ी करके रसिक अवनाश को बुलाने चला गया। और अवनाश से मिल कर उसे कहने लगा————"एक स्त्री आप से मिलना चाहती है। सड़क के मोड़ पर गाड़ी में आप की बाट जोह रही है।

यह कह कर रसिक भवें चढ़ा कर मुसिकराया, परन्तु अवनाश ने उसे मुसिकराते हुये नहीं देखा। उस ने आश्चर्य से कहा————"मेरी बाट जोह रही है। ————"एक स्त्री————वह कौन है ?"

————"आइये चलकर देख ही न लीजिये!———

"उसे आप से कोई विशेष कार्य्य है?"

अवनाश ने बाहर आकर देखा, सड़क के मोड़ पर कालिज के समीप ही एक भाड़े की गाड़ी खड़ी है। कांपते हुये हृदय से वह गाड़ी के पास आ खड़ा हुआ। गाड़ी की खिड़कियों से ज्योति ने अवनाश को अपनी ओर आते देखा। अवनाश के समीप आने पर उसने उस से कहा————"देवर जी! आगये।"

अकस्मात सांप को देख कर जिस प्रकार मनुष्य चौंक उठता है अवनाश भी ठीक उसी प्रकार चौंक उठा। उस के मुख से स्वयं निकल गया————"कौन भावज जी।"

गाड़ीवान ने गाड़ी का द्वार खोल दिया। इच्छा न होने पर भी अवनाश की दृष्टि अन्दर जा पड़ी। उसी समय उस ने गाड़ी का द्वार बन्द कर दिया और ज्योति को सम्बोधित करके कहने लगा————"मैं ने सब कुच्छ सुन लिया है। तुम्हारे साथ अब मेरा कोई सम्बन्ध नहीं। इस प्रकार यदि तुम कभी कभी मेरे पीछे फिरती रहोगी, तो मुझे विवश होकर कलकत्ता छोड़ना पड़ेगा। यह मैं अभी से बताये देता हूं।————"क्या तुम्हारी यही इच्छा है।"

————"नहीं! नहीं!! देवर जी! तुम जाओ। मैं जाती हूं।"

यह कहकर उस ने गाड़ीवान को गाड़ी चलाने की आज्ञा

दी। नमालूम किस असह्य अग्नि से ज्योति का समस्त शरीर जल उठा। उस अग्नि के शोलों से आंखों के आंसु तक सूख गये। वह गाड़ी में अचेत बैठी रही। और कलकत्ता नगर की छाती पर बुरी तरह से खड़खड़ाती हुई गाड़ी तेज़ चाल से चलने लगी।

जिस समय ज्योति रसिक के साथ अवनाश से भेंट करने गई थी, उस समय हेमन्त मकान में उपस्थित न था। वह कहीं बाहर गया हुआ था। जब वह घर वापस आया, तो ज्योति को वहां न पाकर चकित रह गया। वह से पागल हो गया। और मन हो मन में कहने लगा। "जिस ज्योति के लिये मैंने सब कुच्छ छोड़ दिया —— ——जिस के लिये घर बार-मां-बहिन—बन्धु-सम्बन्धी, सब को त्याग कर कठोर कष्ट उठा रहा हूं।————स्वयं को नष्ट करके जिस को प्रसन्न रखने की चिन्ता में रात दिन निमग्न रहता हूं। नह ज्योति मेरी परवाह न करके, मेरी मान-प्रतिष्ठा का खयाल न

करके, न जाने किस से भेंट करने गई है।————सहन की सीमा हो चुकी। अब अधिक सहन नहीं किया जा सकता—आज कुच्छ न कुच्छ इधर या उधर करना ही होगा।———इस से अधिक अब और क्या होगा ?"

जिस समय ज्योति ने घर के द्वार पर पग रक्खा, उ. समय हेमन्त उपरोक्त बातों पर विचार कर रहा था। ज्योति के कमरे में प्रवेश करते ही हेमन्त ने ज्योति को सम्बोधित करते हुए कहा————"ज्योति मैं आज जा रहा हू।"

ज्योति ने निराशाजनक स्वर में कहा——"बहुत अच्छा!"

ज्योति के मुख से यह उत्तर सुन कर हेमन्त का हृदय टुकड़े २ हो गया। वह पागल पन में कहने लगा————"ज्योति! ज्योति!! तुम पत्थर हृदय हो। तुम्हारे हृदय में तनिक भी दर्द नहीं। तुम्हारे लिये मैंने सब कुच्छ छोड़ा। बन्धुओं तथा सम्बन्धियों को तलाञ्जलि दी। अपना भविष्य नष्ट किया। परन्तु तूने मेरी कुछ परवाह न की।

ज्योति ने दृढ़ता पूर्वक केवल इतना कहा————

"हू।"

ज्योति मन ही मन में विचार करने लगी। मैं आज अविनाश से मिलने गई थी। मुझ से यह गलती हो गई कि मैं हेमन्त से पूछ कर नहीं गई। मेरे इस तुच्छ अपराध के

कारण यह क्रोध से उन्मत हो रहा है। और अपने अहसान मुझ पर जतला रहा है। पुरुष होकर अपनी नेकियो और अहसानों की तो यह बड़े गर्व से चर्चा कर रहा है ! परन्तु स्त्री होकर मैं ने जो कुच्छ इस के लिये किया है उस की चर्चा तक नहीं। मैं ने अपने अमूल्य रत्न सतीत्व को, इस संकोच व लज्जा को जो स्त्रियों का अमूल्य रत्न है। उस की प्रज्वलित अग्नि में जलकर भस्म कर डाला। और उस विश्वास की जड़ काट डाली जो देवर जी को मेरी जात पर था। जिस विश्वास का मूल्य जान देने पर भी चुकाया नहीं जासकता। मैं ने इस की प्रसन्नता के लिये स्वयं जल जल कर यह अग्नि का खेल खेला। यदि उस को मेरी बातों पर विश्वास न हो, तो उसे मेरा हृदय चीर कर देखना चाहिये कि इस में कितने दाग पड़े हुये हैं। अपने अहसानों का (जो उस ने मुझ पर किये हैं) तो उसे भली भा ज्ञान । परन्तु मैं ने उस के अहसानों का जो बदला दिया है, उस की ओर उस का ध्यान ही नहीं। यह भी कैसा विचित्र मनुष्य है।

ज्योति को देखकर हेमन्त ने पूछा——"कहां गई थी ?"

——"अबनाश बाबू को मिलने।"

ज्योति के यह शब्द हेमन्त के ज़ख्मी सीने में गरम लोहे की सिलाख के समान लगे।——वह बोला——"तुमने मेरी कुच्छ भी परवाह न की।"

ज्योति हंसी । उस ने अपने मुख से एक अक्षर भी न निकाला । इस के पश्चात वह धीरे धीरे कमरे से बाहर निकलने की चेष्टा करने लगी ।

हेमन्त ने खड़े हो कर कहा——"कहां जा रही हो ।

——"बाहर ।"

——"क्यों ।"

——"मैं तुम्हारे साथ एक कमरे में न रह सकूंगी । क्योंकि मै तुम से आज से ही घृणा नहीं करती, बल्कि सदैव से करती आरही हूं । यदि तुम मेरे मुख से सच्ची बात सुनना चाहते हो, तो ध्यान से सुन लो——यदि मैं यहां कलकत्ता में तुम्हारे साथ आई थी, तो तुम्हारे पिजरे में वन्द चिड़िया बन कर नहीं आई थी । तुम्हारे प्रेम के जाल में फंसकर नहीं आई थी । अबनाश बाबू कलकत्ता में रहते है । वहां के किसी कालिज में शिक्षा प्राप्त करते है । यदि किसी दिन उन से भेंट हो गई, तो उन को बतलाऊंगी कि शका तथा संदेह करने का क्या परिणाम निकला करता है । इस खयाल को सन्मुम रखकर, मैं तुम्हारे साथ कलकत्ता आई थी । तुम ने मुझ पर जो अहसान किये हैं, मझ पर जो नेकी की है, उस का पुरस्कार मैं ने अपना अमूल्य रत्न सतीत्व—सकोच तथा लज्जा देकर चुकता दिया है । तुम अब अपना मार्ग देखो । मै अपना मार्ग देखती हूं ।"

ज्योति के इन शब्दों ने हेमन्त के हृदय पर गहरा प्रभाव

डाला। वह सहम गया। अन्त ज्योति का हाथ पकड़ कर कहने लगा————"ज्योति!"

————"कुच्छ नहीं, छोड़दो।"

यह कहकर उसने अपने आपको हेमन्त के पंजे से छुड़ा लिया। और कहने लगी————"मैंने तुम्हे एक दिन के लिये भी————नहीं! नहीं!! मैं भूल गई, एक क्षण के लिये भी प्यार नहीं किया।————जिस समय तुम मेरे सन्मुख अपना प्रेम प्रकट करते थे, उस समय ही मेरे शरीर के प्रत्येक अंग में आग लग जाती थी, हृदय जल भुन कर राख हो जाता था। और क्या कहुं————मैं न तुम्हारी थी और न कभी तुम्हारी होकर रहूंगी। स्मरण रखो। तुम मेरे हृदय पर कोई चिन्ह नहीं छोड़ सकते। शरीर चाहे कितना ही अशुद्ध और अपवित्र क्यों न हो गया हो, परन्तु मेरा हृदय अब भी उसी तरह शुद्ध है, जैसे पहिले था। वह बेदाग है। तुम इसे नहीं जान सकते। मुझे इस का भली भान्ति ज्ञान है।"

इस के पश्चात ज्योति ने स्वयं को किस गार में डाल दिया? उसने कलकत्ता में वेश्या का पेशा धारण कर लिया। कलकत्ता के बाज़ार में बाज़ारी स्त्री के सदृश वह अपने सौन्दर्य और यौवन को दुकान के समान सजा कर बैठ गई। कितने ही धनाढ्य पुरुष आये। जिमींदार आये। बाबू आये। ज्योति यद्यपि हृदय में प्रत्येक से घृणा करती थी, फिर भी सब के सन्मुख अपने सौन्दर्य को दौलत रख देती। धिन।

किसी संकोच के दाम बतलाती और सौदा कर लेती थी।

जिस समय ज्योति ने वेश्या का पेशा धारण किया था। उस समय नारायण बाबू ने ज्योति को बहुत से अमूल्य कपड़े और आभूषण भेंट किये थे। ज्योति को उन के स्वीकार करने में क्या आपत्ति हो सकती थी।

ज्योति ने जो दीपक अपने हाथों से प्रज्वलित किया था उस के मनोहर प्रकाश पर भोग विलासी, सौन्दर्य के गुलाम, प्रेम के प्यासे। परवानों की भान्ति जल जल कर राख होने लगे।

इस प्रकार वह स्वयं भी जलती थी। इस समय वह अन्धी हो रही थी। मानसिक वासनाओं का शिकार हो चुकी थी। स्वयं तो जलती ही थी, परन्तु अपने साथ उन सब को भी जला कर राख किये देती थी। इसी नशे में वह मतवाली हो रही थी। यह अभिनय उस के लिये सन्तोष जनक था। अवनाश की बेरुखी ने उस के हृदय पर गहरी चोट लगाई थी। उसी चोट पर चरका लगा लगा कर वह सन्तोष—आनन्द की खोज कर रही थी। अवनाश ने उसे अधम समझा था। उसके आचरण को संदेह की दृष्टि से देखा था। उसपर विश्वास न किया था। स्त्री जो अग्नि प्रज्वलित करती है, इस ससार में किस की शक्ति है कि वह इस अग्नि से बच जाये।

हेमन्त से सम्बन्ध तोड़कर, जब उस ने वेश्या का पेशा धारण किया, तो उस समय उसने अपना नाम भी बदल दिया। अब ज्योति————बिजली हो गई थी। बिजली जिस प्रकार चमक दमक रखती है, उसी प्रकार आपने सौन्दर्य की अग्नि से जला कर राख भी कर सकती है।

कई सुख सेवी। भोग विलासी, धनाढय पुरुषों ने स्थान—भुमि—मकान विजली को भेंट करने का अपना निश्चय प्रकट किया, परन्तु बिजली ने इन वस्तुओं को स्वीकार करना अपना अनादर समझा। उस ने उसी मकान में रहना पसन्द किया, जिस में उसने शुरु में रहन सहन रखना पसन्द किया था। उस ने दूसरे मकान में जाना पसन्द न किया।

जब लोग उसके इस अनोखे कार्य्य का कारण पूछते, तो वह स्पष्ट रुप में कहती————"मुझे इस में ही पूर्ण आनन्द मिलता है।" इस घर को न छोड़ने का एक कारण यही था।

वह जिस वक्त संध्या के समय बन ठन कर बैठा करती, जब वह बरामदे में आकर मूर्ति के समान खड़ी हो जाती, तो वह तेज़ शराब की मदहोशी के खयाल से ही मदहोश हो जाती थी। और इन सैकड़ों आने जाने वालो पर, अपनी इच्छा पूर्ण दृष्टि डालकर विचार किया करती थी कि क्या इसी मार्ग से कभी अवनाश भी निकलेगा। यदि वह इस ओर भूला भटका आ निकला, तो उस समय उस को मालूम

हो जायेगा कि उस के तनिक से संदेह करने पर उसकी "भावज" ने क्या कर डाला। दिन व्यतीत होते गये। कितनी ही विचित्र रातें आईं और गईं। परन्तु अवनाश किसी दिन भी इस मार्ग से न निकला। यह देखकर बिजली के दुख दर्द की कोई सीमा न रही।

(२९)

आज रमन को विदा करके बिजली अपने जीवन के अभिनय के पिछले दृश्यों पर दृष्टि डाल रही थी। शीघ्र शीघ्र पर्दों के गिरने और उठने का सीन देखकर वह चकित रह गई। इसी सोच विचार में समय भी धीरे धीरे व्यतीत होने लगा। गंगा ने आकर कहा———"बाईजी! क्या बाल न बनवाओगी।"

भरी आवाज़ में बिजली ने कहा———"नहीं।"

———"नारायण बाबू ने कहला भेजा है वह आज रात आयेंगे?"

———"वह जब यहां पधारें तो नीचे से ही कह देना कि

आज मेरी तबीयत नासाज़ है।" मैं उन से न मिल सकूंगी।

गंगा चुप होगई। उस के आश्चर्य का कोई ठिकाना न रहा। कहीं बिजली पर भूत तो स्वार नहीं होगया, यह एक खयाल था, जिसने उसके हृदय को बेचैन कर दिया था। बिजली की प्रकृति और स्वभाव से गंगा भली भान्ति परिचित थी। परन्तु आज उसे ज्योति की प्रकृति और स्वभाव में विचित्र परिवर्तन दिखाई दिया। गंगा चली गई। बिजली बिस्तर पर जो लेटी। नौकर आया। उसने दीपक प्रज्वलित किया। बिजली ने थर थराती हुई आवाज़ में कहा। दीपक बुझा दो। सिर में सख्त दर्द हो रहा है। प्रकाश आंखो को बुरा मालूम होता है। बिजली के मुख से यह शब्द सुन कर नौकर चकित रह गया। वह थोड़ी देर तक हैरान खड़ा रहा। अन्त दीपक बुझा कर वह भी कमरे से बाहर चला गया।

बिस्तर पर लेटी हुई बिजली बार बार अपने जीवन की पिछली घटनाओं पर दृष्टि डालती और विचार करती थी। वह सोचने लगी—इस के चारो ओर लोग अन गणित संख्या में एकत्र होकर चले आरहे हैं। एक एक मनुष्य ने उसे सूत के धागे से बान्ध कर कहां से कहां ला फैंका है। न मालूम कितनी आंधियां आईं। उन आंधियो की ओर ध्यान देने का उसे समय ही न मिला। वह केवल धक्के खाती हुई दोनों आखें मून्दे अन्धो की भान्ति चलती गई। इस समय वह निर्मल प्रभा कहां है————"और लक्ष्मी

कान्त———वह वामा काली———वह उस के माता-पिता———वह जाति वाले———"और कहां है वह सहृदय अवनाश———"क्या ही अच्छा होता, यदि वह क्षण भर के लिये ऐसी सख्त गलती न करता———

ऐसी अवस्था में बिजली अपनी जीवन यात्रा का कौन सा मार्ग चुन लेती। कौन जाने! वह सोचने लगी, परन्तु बहुत कुच्छ सोच बिचार करने पर भी उसे कोई मञ्जल दिखाई न दी। असीम-आपार सागर में खोया हुआ हृदय हवा की लहरों से नाव के समान डगमगाने लगा। परन्तु अवनाश की बातों से असन्तुष्ट होकर उस ने जो भयानक इन्तकाम लिया है? क्या ऐसा करना उस को उचित था? अवनाश तो अपने घर में बैठा आमोद-प्रमोद का जीवन व्यतीत कर रहा होगा। भोग-विलास में पड़ जाने से उस के हृदय से अब ज्योति की स्मृति रात्री के स्वप्न के सदृश मिट गई होगी———क्या उस पर भी असन्तुष्ट होने की आवश्य-कता है। हृदय में यह प्रबल इच्छा होती है कि मैं उस से भी उसके इस अनुचित बर्ताव का (जो उसने मुझ से किया है) बदला लू———परन्तु नहीं।

और हेमन्त! वह भी तो उसी लक्ष्मी कान्त का हम खयाल है। यह सब वासना के कुत्ते हैं। मान्सिक बासनाओं के गुलाम हैं। छी! छी!! काश! बिजली इन सब को घास के एक तिनके के समा न समझती! और उनकी स्मृति अपने

हृदय से मिटा सकती। अवनाश ! हाये रे ! बिजली तो आज संकोच तथा लज्जा को परे फैंक कर, सतीत्व पर जोकि स्त्रियों का एक अमूल्य रत्न है। और जिस के बिना स्त्री का जीवन तुच्छ जीवन है, चिता बनाकर बैठी है। क्या उस चिता की अग्नि की, जो बिजली ने प्रज्वलित की है, तनिक भी आंच ———एक चिंगाड़ी अवनाश के शरीर तक पहुँची है। यदि इस अग्नि की एक चिंगाड़ी भी उस तक पहुँचती, तो वह कब का जल कर राख हो गया होता। और उस दिन गाड़ी के समीप आकर इस तरह लौट न जाता। तो क्या बिजली ने स्वयं को ही इस अग्नि में जलाया है। बिजली की दोनों आंखों से झर झर आंसु निकलने लगे ! इन आंसुओं ने उसके हृदय को कुच्छ सन्तोष परदान किया। रो रो कर उसने अपने हृदय की अग्नि को शान्त करने का यत्न किया, किन्तु निशफल ? क्या वह अग्नि बुझने वाली थी। यह तो सती की चिता की अग्नि थी। उस की आंखों मे तो असीम पानी था। स्त्री के हृदय में जो आंसुओं का अथाह सागर भगवान ने भर दिया है। उसकी ईर्षा से जली हुई सांस, उसी सागर में न मालूम कब और किस समय डूब जायेगी।

प्रातः काल बिस्तर से उठते ही बिजली ने जोहरी को अपने यहां बुलाया। उसके आने पर उस ने अपने सब आभूषण सामने वाली मेज़ पर फैंककर कहा————"मैं यह सब आभूषण अभी और इसी समय बेचना चाहती हूँ इन के दाम क्या होंगे? तत्काल बताओ। बिजली की लाल-लाल आंखें देखतर और कांपती हुई आवाज सुन कर जोहरी सहम गया, उस ने अच्छा अवसर देखकर दाम बताये और मिट्टी के मूल्य जवाहरात लेकर चुप चाप मन ही मन में मुसिकराता हुआ, अपने घर को लौट आया। घर के लोग चकित रह गये। निचली मञ्जल से रेबती इत्यादि भी आगई।

बिजली ने गंगा को बुला कर कई आभूषण और सौ रुपय नकद उसकी भेंट किये। उसे आभूषण इत्यादि देते समय, कहने लगी————"लो अब किसी अन्य के यहां जाकर नौकरी कर लो।" सावधान! इस महल्ले में भी अब न रहना! गंगा ने सिर झुका कर कहा————"बाई जी! तुम अब कहां जाओगी?"

————"तीर्थ करने!"

गंगा बिजली के मुख से यह शब्द सुन कर चकित रह गई। उसे यह बात बुरी मालूम हुई। यह आमोद प्रमोद—भोग विलास पर लात मार कर काग की न्याईं तीर्थों में घूमती फिरेगी! उफ! इस का यह कोमल शरीर यात्रा के कष्टों को सहन न कर सकेगा। इतने दिनों सेवा के पश्चात जब उसे यह अमूल्य आभूषण और रुपय मिले है, तो वह अपना शेष जीवन भली भान्ति व्यातीत करने के योग्य हो सकेगी, यह सोचकर वह उसी दिन वहां से चली गई। न मालूम कहां?

रेवती और सर्मा ने बिजली को बहुत कुच्छ समझाया, परन्तु बिजली ने किसी की बात तक सुनने का कष्ट न उठाया। उसने भाड़े की गाड़ी मगवाई। गाड़ी पर स्वार होकर सब से पहिले वह काली घाट गई। रुपय वाला बक्स उस ने पास ही रख लिया। नौकर के दान्त पहिले ही इस बक्स पर थे। बिजली ने बक्स को नौकर के सपुर्द करके काली देवी के दर्शन के लिये मन्दिर में प्रवेश किया। बहुत

देर तक सिर झुका उसने काली देवी को प्रणाम किया। तत् पश्चात मन्दिर के चारो ओर प्रक्रमा करके वह नौकर को कहने लगी——————"क्या तू उस बाबू का मकान जानता है?"

——————"किस बाबू का?"

——————"जो बाबू मार्ग में गिर पड़ा था।"

——————"हां! जानता हूँ।"

——————"गाड़ी वहीं लेचल!"

नौकर ने गाड़ी वान को बुलाया। गाड़ी आगई। बिजली गाड़ी में बैठ गई। नौकर काऊच पर जा बैठा। गाड़ी कराल पाड़ा में एक स्कूल वोर्डिंग हाऊस के सामने जा खड़ी हुई। बिजली बक्स हाथ में पकड़कर नौकर के साथ ऊपर की मञ्जल में चली गई। एक मनुष्य उस समय आंगन में खड़ा हुआ था। उस पर दृष्टि पड़ते ही बिजली तत्काल सहम गई। यह क्या?——————"यह तो अवनाश बाबू है। ——————"यह यहां कहां?——————बिजली की आंखों के सम्मुख चारो ओर अन्धकार छा गया। अपनी हार्दिक भावना को मन में ही रखकर उसने इस व्यक्ति से पूछा। ——————"क्या रमन नाम का कोई लड़का यहां रहता है"। अवनाश भी बिजली को देख कर अचम्भे में आ गया। वह मन ही मन में कहने लगा——————"भावज जी! इतने दिनों के पश्चात इस पोशाक में यहां कहां?"——————बिजली का

रूप-रंग क्या कभी वह भूल सकता था ? अन्त सम्भल कर बोला————"हां है। मेरे साथ आइये।"

अवनाश ने बिजली को लेकर एक कमरे में प्रवेश किया। रमन उस समय उस कमरे में एक कुर्सी पर बैठा हुआ था————उस की सूखी दृष्टि आकाश को घूर रही थी। बिजली ने पुकारा————"बेटा रमन!"

रमन चौंक कर खड़ा हो गया। "यह कौन है? ऐं————।" इसके पश्चात सम्भल कर वह बिजली के पाओं पर गिर कर उसके पाओं की धूलि अपने ललाट पर लगा कर कहने लगा————"मां क्या तुम मुझे देखने आई हो?"

————"हां बेटा! तुम इस रुपये के रखने का प्रबन्ध कर लेते तो मैं छुट्टी पा जाऊं।"

————"मां क्या तुम कहीं जा रही हो।"

————"हां बेटा! अब मुझे न रोको। शरीर में कितने ही काले दाग लगा चुकी हूं। तीर्थों के शुद्ध निर्मल जल में नहा धोकर तथा साधु सन्तो के पाओं की धूलि शरीर में मल कर देखूगी कि यह काले दाग दूर भी होते हैं कि नहीं। जिससे मेरा परलोक सुधर जाये।"

अब तक अबनाश चुप खड़ा था। ज्योति के मुख से यह शब्द सुनकर बोला————"केवल साधु-सन्तो के पाओं की धूलि शरीर में मलकर यह काले दाग दूर होने के

नहीं हैं, यदि वह किसी प्रकार दूर हो सकते हैं तो शुभ कर्मों के साथ संसारिक सुखों और आमोद प्रमोद की सामिग्री से मुख मोड़ने से हो सकते हैं। क्योंकि परलोक का सुधार और बिगाड़, संसार के सुधार और बिगाड़ पर निर्भर है । जिसने इस लोक का सुधार किया, उसका परलोक भी सुधर गया। जिसे घर में सन्तोष और आनन्द प्राप्त हैं । उसे वह बाहर भी प्राप्त होते हैं। बाहरी स्थिति भीतरी स्थिति पर अपना प्रभाव डालती है। क्यों कि बाहरी स्थिति भीतरी स्थिति पर अपना पतिबिम्ब डालती रहती है।

इस ससार असार की भान्ति परलोक में भी तीन प्रकार की स्थितियों का होना अति आवश्यक है। पहिली श्रेणी में तो वह लोग होंगे, जिन का संसार जीवन सुख तथा विलास में व्यातीत हो रहा है। जिन्हों ने दान पून्य करना अपने जीवन का विशेष उद्देश्य जान लिया है। और वास्तव में यही एक सम्पूर्ण आनन्द है। यद्यपि इन्हें किसी गलती या किसी बाहरी कारणों से इस संसार में कुच्छ कष्ट सहन करने पड़ते है। या उन्हें कुच्छ दु:ख उठाने पड़ते हैं। मगर परलोक में उन्हें इन के पाने की बहुत कम आशा होती है। यद्यपि इस संसार में मनुष्य वही दु:ख भोगता है। कष्ट उठाता है, जो कष्टों की बहती हुई नदी को अपनी मान्सिक शक्ति से अपनी ओर खींचता है। लेकिन परलोक में यह नहीं होगा। वहां उसे अपने शुभ कर्मों का सूक्ष्म फल भोगना होगा। आत्मा भी तो सूक्ष्म है। इस लिये वह आनन्द भी सूक्ष्म होगा।

दूसरी श्रेणी में वह लोग गिणती में आयेंगे। जो इस संसार के माया-मोह के फंदे में फंस कर, प्रकृति के पुजारी बनकर, मान्सिक वासनाओ के दास बनकर, अपना जीवन पशुके समान व्यतीत करते हैं। वहां भी उन्हें उसी की धुन रहेगो और इसी प्रकार (जिस प्रकार इस संसार में लालसाओं में निमग्न रहते हैं) वहां भी अनगिणत लालसाओं में निमग्न रहेंगे।

स्वर्ग में भी उन्हें आनन्द प्राप्त न होगा। यह वहुत गिरे हुये नीच प्रकृति के मनुष्य है।

तीसरी श्रेणी में वह मनुष्य हैं, जो यहां इस संसार में पाप तथा कुकर्म के भयानक पजे में जकड़े हुये हैं। उन्हे इन कुकर्मों की सख्त सज़ा मिलेगा। क्यों कि पापी यह भली प्रकार समझ लेता है कि वह पाप कर रहा है। उस के साथ उस के हृदय में सज़ा का भय भी जड़ पकड़ता जाता है और जब तक उसे उसके इन पापो का उचित दन्ड न मिल जाता उसको मुक्ति प्राप्त करना असम्भव है।

जिस अबोध बालक या पशु से किसी अन्य मनुष्य की जान चली जाती है और जिस को इस बात का ज्ञान नहीं कि जो कार्य्य वह कर रहा है वह पाप है या पुन्य। वह दन्ड से वञ्चित रहेगा। दन्ड तो उसे मिलता है जो शुभ तथा दुष्ट कर्मों का बोध रखते हुये भी पाप कर वैठता है। पापी, भय लज्जा तथा संकोच से पहचाना जाता है! जिस मनुष्य में वह लज्जा तथा सकोच पाई जाये, समझ लो

वह पापी है। शुद्ध सदाचार मनुष्य में यह बातें नहीं पाई जातीं। जब यह मालूम हो गया कि मनुष्य संसार में जो जो शुभ तथा दुष कर्म करेगा उसी के अनुसार परलोक में उसे दन्ड या पुरस्कार दिया जायेगा, तो फिर वह संसार में कुकर्म करने का नाम न लेगा।' यदि कोई मनुष्य अपना परलोक सुधारना चाहे' तो वह दुष्ट कर्म इसी लोक में ही कर सकता है। यदि वह दुष कर्म करते करते इस संसार से चल बसे, तो फिर उस के लिये अपना परलोक सुधारना असम्भव होगा सुधार का साधन केवल यही है कि जहां तक सम्भव हो, मनुष्य स्वय को कुकर्मो से बचाये। दुषकर्मों से घृणा करे और प्रेम का सागर चारों ओर बहा दे। उस के हृदय में स्वार्थ का नामो निशान तक न हो।

जीवन में परिवर्तन करना सरल भी है और कठिन भी। जिस मनुष्य ने इस को सरल समझ लिया, उसके लिये कुछ भी कठिन नहीं। जिसने उसे कठिन समझ लिया, उसके लिये वह सरल भी कठिन हो जाता है। यह कार्य सरल है और यह कठिन, यह सब खयाल पर निर्भर है। दोनो ओर खयाल ही खयाल है। पाप करते करते मनुष्य पापी बन गया है यदि वह थोड़ा-सा भी यत्न करे तो वह मनुष्य नेक बन सकता है। यदि वह अपने पिछले पापो का प्रायश्चित करे और भविष्य में उन्हें न करने की प्रतिज्ञा करे, तो उसके लिये इस संसार में ही नेक बन जाना कुछ कठिन कार्य नहीं।

लेकिन जो अपने पिछले पापों का प्रायश्चित नहीं करते और भविष्य में भी उनके करने से वाज़ नहीं रहते। वह इस संसार से जाने के वाद् नरक के भागी बनते हैं।"

अवनाश की उपरोक्त बातें सुनकर, रमन की दशा वदल गई। उसके मुख से सहसा यह शब्द निकल गये———
"यहमेरे गुरु है। इनके यहां कोई सन्तान नहीं। यह कालिज के लड़कों को ही अपना सर्वस्व समझते हैं।"

इसके पश्चात वह अवनाश को सम्बोधित करके कहने लगा———"यह मेरी वह मां है, जिसने मेरी जान बचाई थी। मास्टर साहिब! इन की कृपा दृष्टि से मैं आपके चरण कमलो में स्थान प्राप्त करने के योग्य हो सका हूँ।

अबनाश के प्रति बिजली के हृदय में जो बुरे खयाल उत्पन्न हो गये थे। वह एकाकिनी न मालूम किस सागर में जाकर डूब गये। उसकी दोनो आखे आंसुओ से तर हो गई। वह अबनाश के पैरों पर गिर पड़ी। और दर्द भरे स्वर में कहने लगी———"तुम्हारी इन वातो ने मुझे मुक्ति का मार्ग दिखा दिया है। तुम्हारे इस उपदेश ने हृदय के घोर अन्धकार को दूर करने में बिजली का काम किया है। तुम्हारे उपदेश का एक एक शब्द मेरे हृदय में उतर गया। अब मैं भिखारिन बन कर सच्चे आनन्द की खोज करूंगी। साधु सन्तो के सत्संग से लाभ उठाकर अपने हृदय के अन्धकार को दूर करने का प्रयत्न करूंगी। अपना लोक तथा

परलोक दोनों को सुधारने की चेष्टा करूंगी। जिसे देखने को आंखे तरस रही थीं, उसे प्राप्त करने की कुछ आशा सी बंध गई है। देवर जी! क्या तुम मुझ पर विश्वास करके कोई काम मुझे सोंप सकते हो। कृपा करके मुझे बतलाओ कि मुझे अब कौन सा काम करना चाहिये जिसके करने से मेरा लोक और परलोक दोनो सुधर सकते हैं। अब मैं आपके आदेश अनुसार और आपके आधीन रह कर कार्य करना चाहती हूँ। तुम जो काम भी मुझे करने को कहोगे, मै प्रसन्नता पूर्वक उसे पूर्ण करने का यत्न करुंगी। मेरा हृदय भीतर ही भीतर जल कर राख हुआ जाता है। तुम इस अग्नि को शान्त करो, अब यह अग्नि तुम्हारे सिवा किसी अन्य मनुष्य के बुझाये नहीं बुझेगी। यदि तुमने इस ओर से तनिक भी आंख चुराई, तो याद रक्खो! यह अग्नि और भी अधिक भड़क उठेगी और मुझे जला कर राख कर देगी।"

अबनाश ने कहा————"यह महान और अटल विश्वास जो भारतीय स्त्रियो का एक तत्व है, क्या तुम उसी आदर्श को सन्मुख रख कर काम कर सकोगी। संसार में जितने झगड़े भखेड़े हैं, उन से बच कर स्त्री का जो कर्त्तव्य, दया और दर्द————माया————ममता है, उसी से इस प्रचन्ड अग्निकुन्ड की अग्नि शान्त हो सकती है।"

बिजली ने कहा———————तुम्हारे कहने की देर है, मैं सब कुच्छ कर सकती हूं। देवर जी। यदि तुम मुझ पर विश्वास करोगे, तो मुझ में महान शक्ति आ जायेगी।"

अवनाश ने कहा———————"भावज जी! तुम कब तक अपनी बात पर दृढ़ रह सकती हो। ईश्वर न करे यदि क्षण भर में तुम्हारा संकल्प बदल जाये। अथवा तुम्हारे खयाल पलट जायें"

"नहीं। नहीं!! देवर जी। ऐसा नहीं हो सकता। यदि विश्वास हो तो———————।"

यह कह कर बिजली ने रमन को अपनी छाती से लिपटा लिया और उसे इसी तरह छाती से लगाये हुये बोली ———————"यही रमन मेरा बेटा साक्षी है। मैं इसी के सिर पर हाथ रख कर सोगन्ध खाती हू कि मैं अपने संकल्प पर अटल रहूगी।"

———————"मां! मां!!" कह कर रमन भी दृढ़ता और उच्च उत्साह से बिजली की छाती से लिपट गया।

अवनाश ने आश्चर्य्य से देखा यह कैसा इन्दरजाल है। देखते-देखते बिजली के समस्त शरीर से एक विचित्र प्रकाश की किरणें चमक उठीं। रमन के इस तरह बिजली की छाती से लिपट जाने से बिजली के शरीर से सांप की केञ्चली के सदृश वह सब बदनामी का दाग काफूर हो गया। मां के अपूर्व तेज से बिजली का चेहरा चमक उठा।

अविनाश, बिजली के पैरों पर अपना सिर रख कर बोला————भाबज जी ! यह मेरी शान्ति का मूल कारण है। मुझे केवल इसी का आश्रा है। इसी रूप में मैंने तुम्हारी वास्तविक मूर्ति के दर्शन किये हैं। तुम सचमुच देवी हो। आज से तुम मेरी मां हो—न केवल रमन की मां, बल्कि सब संसार की मां हो————तुम वास्तव में बिजली हो। आज मैंने तुम में बिजली की चमक देखी है, तुम बिजली के सदृश जलाने की भी शक्ति रखती हो मां।"

इन दोनों को रोते बिलकते छोडकर न मालूम बिजली कहां चली गई। उसने अपना शेष जीवन किस प्रकार व्यतीत किया, हमें मालूम नहीं। नहीं तो हम उस के शेष जीवन वृत्तान्त से अपने पाठको को अवश्य परिचित करते।

(समाप्तम्)

———

श्री सुदर्शन लिखित उपयोगी पुस्तकें

प्रेम पुजारन

यह एक अतिशय मनोहर सामाजिक शिक्षाप्रद उपन्यास है। इसके लेखक पंजाब के सुप्रसिद्ध लेखक श्री 'सुदर्शन' हैं। यदि आप को स्त्री जाति की अद्वितीय प्रकाश भेदो शक्तियां देखने का चाव है। अथवा आप हिन्दू जाति के अपनी माताओं भगनियों पर अकथनीय अत्याचारों से परिचित होना चाहते हैं तो यह उपन्यास अवश्य पढ़िये। यह उपन्यास बड़ा ही रोचक है। यदि एक बार इसके पहले पृष्ठ को पढ़ लो, और फिर यदि समाप्त किये बिना रोटी खा लो तो मूल्य वापस। भाषा बड़ी सरल और सरस है बढ़िया ऐंटिक कागज सुन्दर छपाई रेशजिल्द, पुस्तक का मूल्य केवल २)

नारायणदत्त सहगल एण्ड सन्ज़ पुस्तक विक्रेता लाहौर।

सुप्रभात

यह पुस्तक भी श्री 'सुदर्शन' जी की ११ पोलीटीकल कहानियों का संग्रह है। कहानियां सब की सब मौलिक तथा सामायिक सद्भावों से परिपूर्ण है। और एक दूसरे से बढ़कर है।

इस पुस्तक में निम्नलिखित कहानियां दी गई हैं—

१—प्रथम किरण। २—एक रमणी का वृत्तान्त। ३—पंथ की प्रतिष्ठा। ४—सत्य मार्ग। ५—रा... हृदय। ६—अंधेरे में। ७—कैदी। ८—हार जीत। ९—अन्तिम साधन। १०—सुभद्रा का उपहार। ११—विद्याधारी (नाटक)।

यदि आप भाषा की जीवता, भावों की उत्कृष्टा और विषय की महान्ता का अद्भुत संग्रह देखना चाहते हैं, तो यह पुस्तक अवश्य मंगवा कर पढ़िये। बढ़िया ऐंटिक कागज़ सुन्दर छपाई सजिल्द पुस्तक का मूल्य २)

नारायणदत्त सहगल एण्ड सन्ज पुस्तक विक्रेता लाहौर।